RNI No. 7127/60

डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City / 411 2023-25

संघशक्ति

मासिक समाचार पत्रिका

वर्ष : 60 अंक : 03 प्रकाशन तिथि : 25 फरवरी कुल पृष्ठ : 36 प्रेषण तिथि : 4 मार्च, 2023

शुल्क एक प्रति : 15/- वार्षिक : 150/- रुपये पंचवर्षीय 700/- रुपये दस वर्षीय 1300/- रुपये

फूलों में तुम हो मुस्काती, ज्योति में तुम जगमगाती।
ये इशारे आने के हैं, पर विश्वास भरो।।

श्रीमान् लक्ष्मण सिंह जी खंगारोत,

लापोड़िया, दूदू को भारत सरकार द्वारा

पद्मश्री प्राप्त होने पर बहुत-बहुत बधाई

और शुभकामनाएं।

श्रीमान् लक्ष्मण सिंह जी खंगारोत

जगवीर सिंह खंगारोत
GVNML लापोड़िया
दूदू, जयपुर

-: शुभेच्छु :-

भवानीसिंह जाखल
अधीक्षण अभियन्ता
PHED, टोंक

संघशक्ति

4 मार्च, 2023

वर्ष : 59 अंक : 03

-: सम्पादक :-

लक्ष्मणसिंह बेण्यांकाबास

शुल्क – एक प्रति : 15/- रुपये, वार्षिक : 150/- रुपये, पंचवर्षीय : 700/- रुपये, दस वर्षीय : 1300/- रुपये

विषय – सूची

❍ समाचार संक्षेप	✍	04
❍ चलता रहे मेरा संघ	✍ श्री भगवानसिंह रोलसाहबसर	05
❍ पूज्य श्री तनसिंहजी (के सम्बन्ध में)	✍ चैनसिंह बैठवास	07
❍ पृथ्वीराज चौहान	✍ विरेन्द्रसिंह मांडण	10
❍ हो कण-कण में आभास आपका	✍ सूरतसिंह कालवा	12
❍ मर्यादा के दृष्टिकोण से भगवान श्रीराम और श्रीकृष्ण	✍ स्वामी श्री अड़गड़ानन्द जी संकलन : डॉ. भंवरसिंह भगवानपुरा	15
❍ शेरों का संघ	✍ ईश्वरसिंह ढीमा	18
❍ शिक्षा का महत्त्व	✍ स्वामी धर्मबन्धु	22
❍ महान क्रान्तिकारी राव गोपालसिंह खरवा	✍ भँवरसिंह मांडासी	25
❍ इतिहास कहाँ है	✍ गुमानसिंह धमोरा	29
❍ दृष्टिकोण-अभिगम	✍ संकलित	30
❍ विचार सरिता (नवसप्रति लहरी)	✍ विचारक	32
❍ अपनी बात	✍	34

समाचार संक्षेप

पू. तनसिंह जी की 99वीं जयन्ती :

25 जनवरी को पू. तनसिंह जी की 99वीं जयन्ती उनके ननिहाल बेरसियाला, जिला-जैसलमेर में बड़े उत्साह पूर्वक मनाई गई। पूज्यश्री का जन्म उनके ननिहाल बेरसियाला में ही हुआ था। इस अवसर पर जैसलमेर जिले से बहुत बड़ी संख्या में लोग बेरसियाला पहुँचे। महिलाओं की उपस्थिति भी उल्लेखनीय रही। जिले के प्रमुख राजनैतिक कार्यकर्ता, सामाजिक कार्यकर्ता, प्रमुख हस्तियों तथा संत समाज के प्रतिनिधियों की भी समारोह में उपस्थिति रही।

इस अवसर पर संरक्षक श्री माननीय भगवानसिंह जी ने कहा कि पू. तनसिंहजी ने एक छोटा-सा सूत्र दिया कि ईश्वर को प्राप्त करने के लिये अन्त:करण की शुद्धि आवश्यक है। अन्त:करण शुद्ध होता है सद्कर्मों से और पूज्यश्री ने स्वधर्म का पालन करने को ही सद्कर्म बताया। स्वधर्म से तात्पर्य है कर्तव्य पालन। कर्तव्य पालन का शिक्षण ही श्री क्षत्रिय युवक संघ दे रहा है। भगवान ने जो मार्ग हमारे लिये निश्चित किया है, उसे छोड़कर कहीं भटक जाना प्रगति नहीं है। पाठशालाओं में संस्कार नहीं मिलते। सभी अपने बच्चों को अच्छी से अच्छी शिक्षा दिलाने का प्रयास करते हैं पर अच्छी शिक्षा क्या होती है, यह नहीं जानते। सच्ची मानवता की शिक्षा कहीं भी नहीं मिलती इस अभाव का अनुभव कर पूज्यश्री ने संघ का प्रशिक्षण प्रारम्भ किया। स्वयं जागृत होता है, वही दूसरों को मार्ग दिखा सकता है। जिसके पास धन है वही दूसरों को दान दे सकता है। जिसके पास बल है वही दूसरों की रक्षा कर सकता है। इसीलिए श्री क्षत्रिय युवक संघ सभी प्रकार की शक्तियों की उपासना कराता है। संघ का कार्य संसार के कल्याण की बात है। अत: अपने आपको बनाओ और संसार को बनने की राह दिखाओ।

इस अवसर पर संघप्रमुखश्री ने बताया कि महापुरुष जब जन्म लेते हैं तो कष्ट, परिश्रम, साधना भी भगवान साथ में भेजता है। इनसे गुजर कर ही महापुरुष का रूप निखार पाता है। पू. तनसिंहजी का जीवन भी इन्हीं कष्टों से गुजरा, साधना व परिश्रम से भरा पूरा रहा। कौम व संस्कृति की स्थिति देखकर वे चिन्तित हुए पर साधारण लोगों की तरह चिन्ता ही नहीं की, चिन्तन भी किया। उसी चिन्तन का परिणाम श्री क्षत्रिय युवक संघ है जिसके माध्यम से युवक प्रशिक्षित होकर अपने पूर्वजों के मार्ग पर चलने को प्रयासरत हैं। पूज्य श्री ने स्वयं इस मार्ग पर चलकर हमें चलने की प्रेरणा दी। संघप्रमुख श्री ने इस वर्ष को पूज्यश्री के जन्म शताब्दी वर्ष के रूप में मनाने और उसमें किये जाने वाले कार्यक्रमों की सूचना भी दी।

पू. तनसिंहजी की पुत्री जागृति बा हरदासकाबास ने, पूज्यश्री की माताश्री माँसा मोती कंवर जी ने हर कठिनाई में जिस प्रकार पूज्यश्री का लालन-पालन किया, उसके लिये इस बेरसियाला की धरती को नमन किया। मातृशक्ति के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए कहा कि माता ही निर्माता होती है।

बेरसियाला के अतिरिक्त राजस्थान व गुजरात में अनेकों स्थान पर तथा पूना, मुंबई, हैदराबाद में भी जयन्ती कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। जयपुर में इस अवसर पर पारिवारिक सहभोज भी रखा गया।

(शेष पृष्ठ 24 पर)

चलता रहे मेरा संघ

{उच्च प्रशिक्षण शिविर, आलोक आश्रम बाड़मेर में 27 मई, 2022 को माननीय संरक्षक श्री भगवानसिंह जी रोलसाहबसर द्वारा प्रदत्त प्रभात संदेश}

जानकार और न जानने वाले, हमारे समाज के और इतर समाज के लोग भी चरित्र सम्बन्धी चर्चा करते हैं जो आप भी सुनते ही होंगे। कोई अठारहवें शताब्दी की बात करते हैं, कोई सत्रहवीं की करते हैं, कोई सोलहवीं की करते हैं। उनके पास कोई योजना नहीं है और कहते यह हैं कि हम संस्कारों का निर्माण करते हैं, चरित्र का निर्माण करते हैं, राष्ट्र को अच्छे भावी नागरिक देने की बात करते हैं पर इनके पास है कुछ नहीं। अपना अपना सोच है। जो वे बात करते हैं हम उसको सविनय स्वीकार तो नहीं कर सकते पर वे अपने स्थान पर हो सकता है सही हों, यह कुछ कह नहीं सकते।

चरित्र इतिहास से ही स्पष्ट होता है। पूर्व काल के संस्कारों से ही युद्ध लड़े जाते रहे हैं। शौर्य, तेज, धैर्य, चतुरता, संघर्षशीलता, दान और ईश्वर भाव यह स्वभाव पीढियों से जिस कौम के रक्त में चलते आये हैं, उन्होंने इतिहास रचा। लेकिन हम इतिहास की बात नहीं कर रहे हैं, हम दूसरे प्रकार के इतिहास की बात करेंगे। चरित्र का मतलब केवल लंगोट का पक्का होना मात्र ही नहीं है। उसकी वाणी, उसके नेत्र, उसके कान, उसका मुख आदि अनेक इन्द्रियाँ किस प्रकार व्यवहार करती हैं, यह महत्त्वपूर्ण है। इनमें यदि कोई खामी रह गई है तो वह खामी दूर कर हम प्रयत्न करते हैं कि हमारा चरित्र उज्ज्वल बने। चलचित्रों में हमारे चरित्र पर धब्बे लगाये जाते हैं। यह हमको नहीं सुहाता और हम विरोध भी करते हैं। किन्तु मेरी ऐसी मान्यता है कि हमारे चरित्र पर अनावश्यक धब्बे लगाना गलत है, पर हमारे चरित्र में कोई न कोई कमी आई जरूर है।

युद्ध कौशल में हम महाभारत काल से भी, इस मध्यकाल में, जिसे राजपूत काल कहा जाता है, आगे निकल गये थे। अब युद्ध में सिर कटने के बाद भी योद्धा युद्ध लड़ते रहे हैं। जिसने अपने पति का मुख भी नहीं देखा होगा, वह वीरांगना युद्ध में शहीद हुए अपने पति के साथ स्वर्गारोहण करती है। ऐसा पूर्व के इतिहास में नहीं मिलता। ये विशेषताएँ तो बहुत बढी लेकिन दूसरी तरफ कमियाँ भी बहुत आई। हमारे युद्ध का उद्देश्य बहुत छोटा हो गया। या तो हम जमीन के लिये लड़े, या किसी स्त्री के लिये लड़े, या वैर भाव निकालने के लिये लड़े। बाहरी दुश्मन जो देश पर आक्रमण करता है, वहाँ हम संगठित होकर नहीं लड़े, अनेक बार चूके हैं। यह चरित्र की कमी ही कही जायेगी।

जहाँ तक बात है संस्कार की तो इसकी परिभाषा भी बहुत कम लोग जानते हैं। संस्कार का यथार्थ क्या है, यह तो बहुत ही कम लोग जानते हैं। हम में से भी कम लोग जानते हैं, इसलिए उत्तर नहीं दे पाते हैं, निरुत्तर हो जाते हैं। हमारे यहाँ सौलह संस्कार की पद्यति रही है। कई जगह ज्यादा भी बताए गए हैं। बच्चा जब गर्भ में आता है उससे भी पहले संस्कार की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है। माता-पिता का मिलन होता है जो अलग-अलग वंश के हैं, अलग-अलग वातावरण में रहे हैं। एक मातृ पक्ष है, एक पितृ पक्ष है। उनका इतिहास कैसा रहा है, उनका चरित्र कैसा रहा है, वे ही हमारे अन्दर संस्कार बनकर आते हैं। इसीलिए हमारे ऋषियों ने विवाह होने के बाद ही नहीं, विवाह होने के पहले भी संस्कार प्रक्रिया दी है।

विवाह होगा तभी तो गर्भ में आयेगा कोई। आत्मा तो भटक रही है, वह अपने कल्याण के लिये

किसी न किसी गर्भ में आये, लेकिन कौनसा ऐसा गर्भ है जिसमें वह जाये? माता ने, पिता ने विवाह से पूर्व कैसा खान-पान रखा, क्या सुना, क्या देखा, क्या किया वह हमारे मस्तिष्क पटल पर अंकित हो जाता है, इसलिए ही ऋषिगण सावधान करते हैं। फिर विवाह के समय भी संस्कार किया जाता है, उसमें अनेक प्रार्थनाएँ हैं। हमने भी इस प्रकार की एक पुस्तक प्रकाशित की है-'सोलह संस्कार और संघ'। जब वे एक बिस्तर पर जाने वाले हैं, उससे पहले शान्त चित्त से परमात्मा का चिंतन करते हुए प्रार्थना करें कि मुझे अच्छी सन्तान दो, पुत्र या पुत्री जो मेरे कल्याण में मेरी सहायक हो, पूर्वजों के कल्याण में सहायक हो, मानवता के कल्याण में भी सहायक हो, इस प्रकार की सन्तान मुझे देना। यह माँग हममें से किस-किस विवाहित व्यक्ति ने की? नहीं की, इसीलिए यहाँ बुलाकर कहना पड़ता है।

हम जो अन्न खाते हैं, उसका बड़ा प्रभाव होता है। समुद्र तपता है तो समुद्र का पानी भाप बनकर ऊँचा उठता है। यहाँ से संस्कार बनने शुरू हो जाते हैं, भगवान ने यह व्यवस्था की है। ऊपर जाकर वे बादल बनते हैं, हवाओं के टकराने से वे बादल टकराते हैं, तब बरसात होती है। कुछ समुद्र में गिरती है, कुछ दूसरी जगह। जहाँ वह गिरती है वहाँ अन्न उत्पन्न होता है, वनस्पति उत्पन्न होती है। वह अन्न और वनस्पति हम खाते हैं, वह श्रेष्ठ हो यह भगवान ने व्यवस्था की है। लेकिन हम इस मुँह के स्वाद के लिये बाजार से लाकर अभक्ष्य खाते हैं, भक्ष्य का त्याग करते हैं, तो संस्कार कैसे बने? इसीलिए क्षत्रिय युवक संघ ने बहुत सावधानी के साथ पिछले कुछ वर्षों से संस्कार और ब्रह्मचर्य पर प्रशिक्षण दिया है। केवल काम वासना से प्रेरित होकर पत्नी के साथ भोग करने से जो संतान होगी, वह वासनाओं और कामनाओं में ही रहेगी, वह संस्कारित कैसे हो सकेगी?

आवश्यकता है कि संस्कारों को हम पुनः धारण करें। खाने-पीने पर ध्यान रखें। हम जो कुछ करते हैं, हमारे बच्चे उसे बड़े ध्यान से देखते हैं। आपने अभिमन्यु के बारे में सुना है। माँ के गर्भ में ही, सुभद्रा के गर्भ में ही, जो अर्जुन सुभद्रा को चक्रव्यूह के बारे में बता रहा था, सुन रहा था। सुभद्रा को नींद आ गई। चक्रव्यू में प्रवेश तो सुन लिया था, माँ को नींद आ जाने की वजह से चक्रव्यूह से निकलने की बात नहीं सुन सका। परिणाम देखा-अभिमन्यु युद्ध में मारा गया। माता की थोड़ी-सी चूक कितना दुष्परिणाम छोड़ जाती है, यह इतिहास हमको बताता है।

इतिहास नहीं हो तो नहीं जान सकते कि बहुत से दृढ़ प्रतिज्ञित लोगों ने अपने परिवार की पारिवारिकता को बनाए रखने के लिये जीवन भर ब्रह्मचारी रहने का संकल्प लिया। महात्मा भीष्म, चुंडा ये उदाहरण हमारे पास हैं, यह इतिहास हमको बताता है। संस्कार में जहाँ चूक हुई दुर्घटना घटी। इसमें सावधानी हटी और दुर्घटना घटी। आप लोग क्षत्रिय युवक संघ के शिविर में ग्यारह दिन के लिये आये हैं। सघन प्रयत्न किया गया है। प्रवचनों के द्वारा, चर्चाओं के द्वारा, खेलों के द्वारा, घट के द्वारा, हर समय सावधानी बरतने का प्रयत्न किया गया। भोजन करते समय भी सावधानी, निवृत होने के लिये जाते समय भी सावधानी। इस प्रकार की सावधानी रखेंगे तो भी बहुत कुछ करना शेष है। हमारे पूरे समाज को संस्कारित होने में शताब्दियाँ लग कती हैं। तब तक हमको धैर्य रखना पड़ेगा और हम धैर्य रखेंगे। यह हमारी कौम की विशेषता है, केवल क्षत्रिय युवक संघ और मेरी आपकी नहीं। परमेश्वर हमको इस प्रकार धैर्य, साहस और शक्ति दे कि हम संस्कारित बन सकें, आज के मंगल प्रभात में क्षत्रिय युवक संघ की ओर से यही मंगल प्रभात संदेश है।

●

गतांक से आगे

पूज्य श्री तनसिंहजी (के सम्बन्ध में)

''जो कुछ देखा, समझा व अनुभव किया''

– चैनसिंह बैठवास

श्री क्षत्रिय युवक संघ के इतिहास के पन्नों को टटोलते हैं, इन्हें पलट कर देखते हैं तो हमारे मानस पटल पर एक गाँव उभरकर आयेगा–''खेतसिंह का कड़िया''। यह गाँव इस बात का साक्षी है कि इसकी धरा पर श्री क्षत्रिय युवक संघ के संस्थापक पूज्य श्री तनसिंहजी गंगदासोत सोढा राणसिंहजी की पुत्री बाई राजकंवर के साथ फेरे लेकर आज से करीब 75 वर्ष पूर्व विवाह के पवित्र बन्धन में बंधे थे। पूज्य श्री तनसिंहजी का ससुराल व उनकी अर्द्धांगिनी बाई राजकंवर का पीहर होने से यह गाँव हमारे लिये विशेष महत्त्वपूर्ण बन गया है। संघ के स्वयंसेवकों के लिये यह गाँव सदैव आकर्षण का केन्द्र बना रहेगा और इस गाँव से सदा विशेष लगाव भी बना रहेगा। श्री क्षत्रिय युवक संघ के इतिहास में यह गाँव अजर–अमर बना रहेगा और सदा याद किया जाएगा। यह गाँव, इस गाँव की धरा हम सभी के लिये तीर्थ–स्थल से कम नहीं है। इस गाँव और इसकी धरा को शत् शत् वन्दन।

खेतसिंह का कड़िया सोढा गंगदास नारणोत के वंशजों का गाँव है। रतोकोट के राणा नारायणसिंह जी के पुत्र गंगदासजी से सोढा राजपूतों में गंगदास सोढा (गंगदासोत सोढा) शाखा पृथक हुई। गंगदासोत सोढों का पाटवी ठिकाना छोळ है। इनके अलावा इनके अन्य ठिकाने हवेली, सिरनोई, खेतसिंह का कड़िया, अखेराज का कड़िया, नपला, राणकदेर हैं। इन सभी ठिकानों (गाँवों) में जागीरदारी प्रथा थी।

सोढा गंगदासजी नारणोतकी सातवीं पीढी में खेतसिंहजी हुए। खेतसिंहजी के नाम से खेतसिंह का कड़िया इस गाँव का नाम पड़ा। जो तहसील–छोळ, जिला–अमरकोट, प्रान्त–सिन्ध में आया हुआ है।

वंशावली

राणा नारायणसिंह

रतोकोट

रामसिंह | बैरसी | गंगदास (गंगदासोत सोढा)

गंगदास (गंगदासोत सोढा)
- कमीनदाससिंह
- सादुलसिंह
- अजबसिंह
- देवीदानसिंह
- जवाहरसिंह
- खेतसिंह

खेतसिंहजी गंगदासोत की तीसरी पीढी में राणसिंह जी हुए। राणसिंह जी अपने गाँव में ख्याति प्राप्त व प्रभावशाली व्यक्ति थे। राणसिंह जी को अपनी पुत्री के सम्बन्ध के लिये होनहार लड़के की खोज तो थी ही और उस वक्त छोळ में एक सम्मेलन हुआ। इस वक्त पूज्य श्री तनसिंहजी नागपुर में विधि सनातक की पढाई कर रहे थे, इस सम्मेलन में शरीक हुए। पूज्य श्री तनसिंहजी ने जिस समय सम्मेलन को सम्बोधित किया उस वक्त उस सम्मेलन में काफी लोग सोढा परिवार के थे, जिनमें खेतसिंह का कड़िया ठिकाने के प्रमुख व्यक्ति राणसिंहजी, जयसिंह जी व खूमसिंहजी, अखेराज का कड़िया ठिकाने के प्रमुख व्यक्ति बीजराजसिंहजी, मंगलसिंहजी व मेहताबसिंहजी, हवेली ठिकाने के प्रमुख व्यक्ति बींजराजसिंहजी, सगतसिंहजी, रूपसिंहजी व पूरसिंहजी, सिरनोई ठिकाने के प्रमुख व्यक्ति श्यामसिंहजी, राजससिंहजी व भूरसिंहजी, तथा

नई छोळ ठिकाने के प्रमुख व्यक्ति नारायणसिंहजी, चतरसिंहजी व मोड़सिंह जी थे। इन प्रमुख व्यक्तियों के अलावा भी सोढा परिवार के बहुसंख्यक लोग इस सम्मेलन में शरीक हुए थे, जो पूज्य श्री तनसिंहजी के सम्बोधन को सुनकर उनसे बहुत प्रभावित हुए। राणसिंह जी को अपनी पुत्री के सम्बन्ध के लिये होनहार लड़के की तलाश पहले से थी, वे पूज्यश्री को सुनकर अत्यधिक प्रभावित तो हुए, पर यह सोच कर असमंजस में पड़ गये कि लड़के के पिताजी अब हैं नहीं, लड़का चश्मा लगाता है, यह क्या कमायेगा। पूज्यश्री तनसिंहजी जिस समय चौपासनी स्कूल जोधपुर में पढते थे, उस समय उनके साथ पृथ्वीसिंह जी अमरकोट राणा चन्दनसिंह जी के काकोसा का लड़का भी चौपासनी विद्यालय में पढता था। ये बाड़मेर के भाणजे थे। राणसिंहजी को पसोपेश में देख अमरकोट के राणा चन्दनसिंहजी व पृथ्वीसिंह ने कहा–ऐसा होनहार लड़का मिलेगा नहीं, तब राणसिंहजी इस सम्बन्ध को करने के लिये तत्पर हो गये। राणसिंह जी का कुड़ला में पहले से सम्बन्ध था। इनकी बड़ी पुत्री समन्द्रबाई की शादी कुड़ला में भूरसिंहजी महेचा से हुई थी इसलिए इन्होंने पूज्य श्री तनसिंहजी की जानकारी कुड़ला गाँव के सोहनसिंहजी महेचा से ली। कुड़ला गाँव बाड़मेर के समीप ही है। वैसे राणसिंह जी के कुटुम्ब के अधिकांश सम्बन्ध पहले से बाड़मेर क्षेत्र में थे। राणसिंहजी के पिताजी बाँकसिंहजी की शादी गोरड़िया गाँव में हुई थी। राणसिंहजी स्वयं की शादी इन्द्रोई गाँव में हुई थी। सोहनसिंहजी महेचा कुड़ला के जरिये यह सम्बन्ध तय हुआ।

पूज्य श्री तनसिंहजी के सम्बन्ध के बारे में माँसा ने बताया–''एक दिन बोला (पू. श्री के बारे में), हैदराबाद में राजपूत सभा की मीटिंग है, मैं भी वहाँ जा रहा हूँ। वह वहाँ गया। वहाँ क्या हुआ? उसने क्या किया? मुझे मालूम नहीं, पर इस मीटिंग के थोड़े ही समय बाद छोळ से समाचार आया कि राणसिंहजी अपनी कन्या का सम्बन्ध मेरे पुत्र के साथ करना चाहते हैं। राणसिंहजी के परिवार के सुसंस्कारों से व उनकी प्रतिष्ठा से मैं पहले से ही परिचित थी अत: मैंने यह सम्बन्ध स्वीकार कर लिया।''

शादी के उपलक्ष में तनसिंहजी की शादी का नेता (नेतरा) तनसिंहजी के बड़े भाई प्रतापसिंहजी की कोटड़ी में लिया गया। पूज्य श्री तनसिंहजी की बारात रेलगाड़ी से बाड़मेर से नई छोल रेलवे स्टेशन तक गई। नई छोळ रेलवे स्टेशन से दो किलोमीटर की दूरी पर खेतसिंह का कड़िया गाँव है, वहाँ ऊँटों से पहुँची। पूज्य श्री की शादी के समय बाई राजकंवर 15 वर्ष की उम्र में थी जो तनसिंहजी के संग विवाह के पवित्र बंधन में बंधी। बारात पाँच दिन तक खेतसिंह के कड़िया गाँव में रुकी। वापसी में बारात नई छोळ से जसाई रेलवे स्टेशन उतरी। जसाई से ऊँटों पर दांता गांव आयी। बलवन्तसिंह जी के बड़े भाई व तनसिंहजी के बड़े पिताजी रणजीतसिंह जी की कोटड़ी में बारात ठहरी। एक दिन दांता गाँव में बारात रुकी यहाँ शादी की खुशी में गोठें दी गई। दूसरे दिन ऊँटों से बारात रामदेरिया आई। बारात आने पर माँ सा ने खुशी में जो कहा, उन्हीं की जुबानी–

''उस दिन 26 जून, 1947 को मेरा घर खिल उठा। खेतसिंह की कड़िया (छोळ) जिला अमरकोट थारपारकर (पाकिस्तान) के ठाकुर राणसिंह सोढा गंगदासोत की पुत्री बाई राजकंवर आनखशिख सजी–धजी दुल्हन, मेरी पुत्र वधू बनकर मेरे घर आई। मेरी पुत्र वधू सुकोमल, सयानी और भली, मेरे घर की लाज, लाड़ प्यार से पली सुकुमारी सी, किसी बगीचे में मधुमास की खिली कली–सी, पैरों में पायल, अंगुलियों में बिछुए पहने सुन्दर सुरंगे परिधान में लिपटी वह मेरे आँगन की शोभा बनी। मेरे पुत्र को पाकर उसे सुहाग मिला और उसे पाकर मेरे घर के आँगन को सुहाग मिल गया।''

वंशावली

खेतसिंह (खेतसिंह का कड़िया)

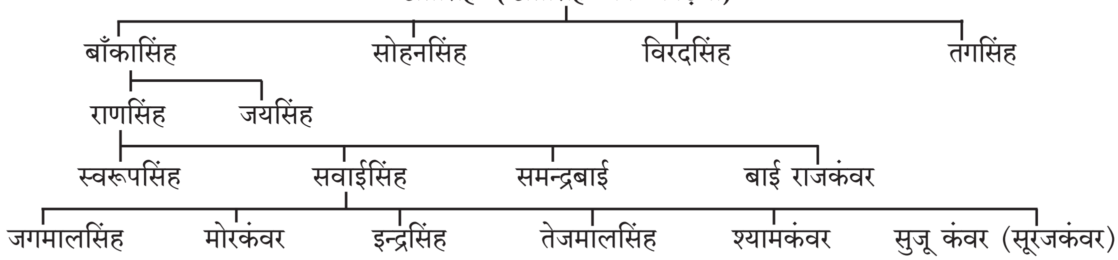

सोढा राणसिंह जी के बड़े पुत्र स्वरूपसिंहजी का 10-12 साल में देहान्त हो गया। राणसिंहजी के पुत्र सवाईसिंहजी की शादी गाँव चाडी (बाड़मेर) में गेनसिंहजी महेचा की पुत्री रेखबाई से हुई। सवाईसिंह जी का परिवार सिवाना (जिला बाड़मेर) में आकर बस गया। सवाई सिंह जी का देहान्त अपने गाँव खेतसिंह का कड़िया में ही हुआ। सवाईसिंहजी के तीन पुत्र व तीन पुत्रियाँ हैं। बड़ा पुत्र जगमालसिंह अध्यापक है। इनकी शादी पालड़ी जोड (पाली) में अनाड़सिंह जी राणावत की पुत्री बबलाकंवर (मोना कंवर) से हुई। सवाईसिंह जी की पुत्री मोरकंवर की शादी विरेन्द्रसिंह चम्पावत सिंघाना पुत्र श्री रिछपालसिंह के साथ हुई। इन्द्रसिंह जी की शादी 28 अप्रेल, 1998 को खिवान्दी गाँव में लालसिंहजी देवड़ा की पुत्री संतोष कंवर से हुई। इन्द्रसिंह जी की शादी सिवाना (बाड़मेर) में सुन्दरिया बेरा पर की थी। शादी के बाद इन्द्रसिंह जी अपनी पत्नी को लेकर अपने गाँव खेतसिंह का कड़िया (पाकिस्तान) चले गये। ये पाकिस्तान में अध्यापक के पद पर थे। शादी के बाद 17 साल तक पाकिस्तान में रहे। अध्यापक की नौकरी से सेवानिवृत होने के बाद सिवाना आकर यहाँ रहने लगे। तेजमालसिंह जी की शादी मारूड़ी गाँव में देवीसिंहजी महेचा की पुत्री चन्द्रकंवर के साथ हुई। सवाईसिंह की पुत्री श्यामकंवर की शादी गजेन्द्रसिंह कुम्पावत भीमसिंह का गुड़ा (पाली) के साथ हुई तथा सुजू कंवर (सूरज कंवर) की शादी जितेन्द्रसिंह चम्पावत गाँव वाड़िया (पाली) के साथ हुई

खेतसिंह का कड़िया नहरी (सिंचित) क्षेत्र है। पहले इस गाँव की मुख्य उपज चावल थे। वर्तमान समय चावल कमी ही बोते हैं। गेहूँ तो खाने के हिसाब से ही बोते हैं। इस क्षेत्र में आम के बड़े-बड़े बाग हैं। गर्मी में कपास,मिर्च व सर्दी में रायड़ा, गेहूँ की फसल बोते हैं।

इस गाँव की बहु संख्यक आबादी सोढा राजपूतों की है। इनके अलावा इस गाँव में रावणा राजपूत, कामदार, भील,कोहली, ओद (कुम्हार) व मुसलमान हैं। पूज्य श्री की शादी के समय तो इस गाँव में मुसलमानों के केवल दो ही घर थे। **(क्रमशः)**

तुम्हारा समर्पण लाजवाब था। परन्तु मैंने तुम्हारे लिए क्या किया? अच्छा ओढने-बिछाने के लिये ही तुम न पा सकी तो अच्छा पहनने खाने की तो बात ही क्या रही? मेरे घर की देहली पर चढकर तुमने लक्ष्मी की कृपा बरसाई। मेरे वीरान घर को तुमने आबाद किया।

- पू. तनसिंहजी के उद्गार अपनी पत्नी के प्रति

गतांक से आगे

पृथ्वीराज चौहान

– विरेन्द्रसिंह मांडण (किनसरिया)

गोरी नाम का तूफान : भाग–3

पिछले भाग में हमने देखा कि 1178 ईस्वी में शहाबुद्दीन गोरी को राजस्थान–गुजरात की ओर किए सैन्य अभियान में बुरी तरह पराजय मिली। पर इसे लेकर हुए आधुनिक लेखन में गंभीर समस्याएँ मिलती हैं।

मिन्हाज–उस–सिराज की तबकात इ–नासिरी का अनुवाद करते समय मेजर हेनरी ज्योर्ज रेवर्टी ने एक ही झटके में मुसलमानें की सदियों के प्रयत्नों से बनायी भारत की समझ को धता बता दिया। उनके अनुसार (संक्षिप्त व्याख्या) :–

''गोरी सेना के भारत में जाते समय थार मरुस्थल से होकर निकलने के कारण सैनिक थके हुए और अश्वादि पशु भूखे थे जब उन पर युद्ध थोपा गया।''[1]

बड़ी विचित्र बात है। एक सुनियोजित अभियान के अंतर्गत कौन अपनी ताजादम सेना को लड़ाई पूर्व ही जान–बूझकर रेगिस्तान से घसीटता है? क्या हमें यह मान लेना चाहिए कि सुबुक्तगीन और महमूद जैसों के अनुभव से सीखने वाला गोरी आगे का भूगोल समझे बिना ही अपनी सेना को धकेले जा रहा था? लोद्रवा और नाडोल में मुस्लिम सेना की जानकारी निश्चित ही चौहानों से होते हुए धारावर्ष परमार और चौलुक्यों तक पहुँच गई थी। यदि शहाबुद्दीन गोरी अपने लश्कर को किसी मूर्खतापूर्ण ढंग से थका कर ला रहा था तो भारतीय सेनाओं को उसे समाप्त करने के लिये अरावली की घाटी जितना भीतर आने देने की कोई आवश्यकता नहीं थी। मरुस्थल में निपटा देना और भी सरल होता।

सच तो यह है कि गोरी की मुख्य सेना का मार्ग रेगिस्तान में गहरा था ही नहीं। वो रेगिस्तान के किनारे और किराडू, सांडेराव आदि कई नगरों, गाँवों से होता हुआ निकला जहाँ उसकी सेना ने युद्धोन्माद में खूब लूट और मारकाट मचाई। तब तो कोई भूख और थकान का मारा नहीं था। रही बात मरुस्थल की, तो वो नाडोल से बहुत पहले ही समाप्त हो चुका था। बात का मर्म यह है कि रेवर्टी के बताई भूख और थकान, व इसामी[2] के बताये भयानक हाथी (कासिंद्रा की तंग घाटी में); ये सब तभी प्रकट होते हैं जब इस्लामी लेखकों की लेखनी एक सीधी लड़ाई में गाजियों के संहार का वर्णन करने में काँपती है। सीधी लड़ाई से यहाँ तात्पर्य है जब सैनिक सीधा भिड़े और प्रभाव डालने वाले अन्य घटक जैसे अश्व, गज, धनुर्युद्ध आदि गौण हो जाएँ।

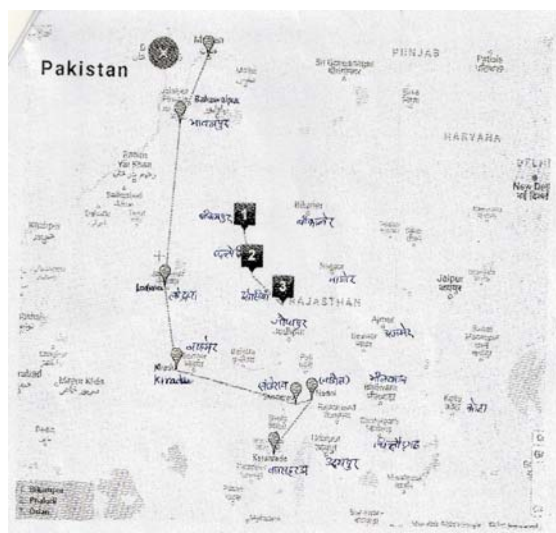

मानचित्र पर एक दृष्टि डालने से ही स्पष्ट हो जाता है कि गोरी ने बारीकी से अपना मार्ग चुनते हुए अजमेर, पाटन जैसे अधिक शक्तिशाली राज्यों पर सीधे

आक्रमण नहीं किया। इस समय दक्षिणी सिंध गोरी के हाथ में नहीं था। राजस्थान में पृथ्वीराज तो गुजरात में सोलंकी बैठे थे। मरुभूमि के किनारे चलकर छोटे राज्यों से होते हुए घुसने की चालाकी अन्त में गोरी को भारी पड़ी। भाटी इतिहास के कुछ स्रोतों की मानें तो कासहरड़ में हारकर लुटी-पीटी गोरी सेना जब तलवारों से बचने के लिये मरुस्थल होते हुए लौट रही थी, तब रावल जैसल ने लोद्रवा की लूट का प्रतिशोध लेने के लिये उन पर आक्रमण कर दिया।[3]

पृथ्वीराज के राज्याभिषेक का वर्ष-भूमिका :

शौर्य के धनी अजमेर नरेश का इतिहास पग-पग पर विवादों से ग्रस्त है, जिनमें अधिकतर के बने रहने का कोई औचित्य नहीं है। चौहान कुलभूषण के जन्म वर्ष पर स्थिति हम पीछे ही स्पष्ट कर चुके हैं। लेकिन वैसे ही स्पष्टीकरण की आवश्यकता उनके राज्याभिषेक के वर्ष पर भी है।

गोरी के गुजरात अभियान से जुड़ी जानकारी (जो कि अगले अंक में आएगी) से पृथ्वीराज के राज्याभिषेक के वर्ष पर बनी उलझन भी सुलझ जाती है। दरअसल पृथ्वीराज चौहान का राज्याभिषेक तो 1177 ईस्वी में माना जाता है पर उनके पिता सोमेश्वर का अन्तिम शिलालेख आँवलदा से 1178 ईस्वी का बताया जाता है। इसे लेकर श्री दिनेशचंद्र सरकार ने लिखा था कि सोमेश्वर के अन्तिम शिलालेख की तिथि जो वि.सं. 1234 भाद्रपद है, पृथ्वीराज के प्रथम शिलालेख बड़ला वि.सं. 1234 चैत्र के बाद पड़ती है। वो बड़ला शिलालेख में एक वर्ष की गलती मानकर और संवत को कार्तिक से शुरू मानकर यह तक कह गए कि सोमेश्वर की मृत्यु आँवलदा शिलालेख अगस्त 1178 ई. (उनके अनुसार) के बाद हुई और पृथ्वीराज का राज्याभिषेक बड़ला शिलालेख यानी मार्च 1179 ई. (उनके अनुसार) से थोड़ा पूर्व होना चाहिए-अर्थात् 1178-79 ईस्वी की संधि पर कहीं,[4] आधुनिक काल के विद्वान इस पहेली से भरपूर दो-दो हाथ किये बिना आगे बढ़ गए। बाद में आए एक स्रोत प्रबन्धकोष ने भी पृथ्वीराज के राज्याभिषेक का वर्ष 1179 ई. बताया है।

प्रबन्धकोष की जानकारी व श्री सरकार की धारणा से समस्या यह है कि बाकी सभी साक्ष्य व स्थापित घटनाक्रम इसके विरुद्ध जाते हैं। पृथ्वीराज के राज्याभिषेक के बाद क्रमवार दो महत्त्वपूर्ण घटनाएँ हुई जिन्हें हम अब तक विस्तार से देख चुके हैं-

1. विग्रहराज के पुत्र नागार्जुन से पृथ्वीराज का सिंहासन उत्तराधिकार युद्ध और उसके बाद 2. पृथ्वीराज के ही शासनकाल में गोरी का पश्चिमी, दक्षिणी राजस्थान होते हुए गुजरात की ओर अभियान।

यह क्रम समकालीन ग्रन्थ पृथ्वीराजविजय द्वारा स्थापित है। भारतीय व फारसी दोनों प्रकार के ग्रंथों, अभिलेखीय स्रोतों आदि द्वारा भलीभाँति सिद्ध है कि दोनों ही घटनाएँ 1178 ईस्वी की समाप्ति से पहले तक हो गयी थी। ज्ञात यह है कि दोनों ही घटनाओं के समय पर सोमेश्वर जीवित नहीं थे, और चौहान सिंहासन पर तब तक अवयस्क पृथ्वीराज बैठ चुके थे। सो निश्चित है कि पृथ्वीराज 1178 ईस्वी से पहले ही अजमेर के सिंहासन पर आरूढ़ हुए। विस्तृत व निर्णायक पुष्टि के लिये साक्ष्यों सहित अगले अंग में हम उन वर्षों के घटनाक्रम का सिंहावलोकन करेंगे।

(क्रमशः)

उद्धरण :- 1. खण्ड-1, पृष्ठ 452, 2. फुतुह-अस्सलातीन, अनुवाद-आगा महदी हुसैन 1898, पृष्ठ 139, 3. हिस्ट्री ऑफ जैसलमेर - श्री रामवल्लभ सोमनी, 4. एपिग्राफिया इंडिका खंड-32, पृष्ठ 303

हो कण–कण में आभास आपका

– सूरतसिंह कालवा

आज जब समाज चौराहे पर खड़ा कर्तव्य विमूढ हो रहा है, कोई राह (मार्ग) नहीं ढूंढ पा रहा है, अकर्मण्यता और निराशा छा रही है, मनुष्य शरीर की उपयोगिता समझ में नहीं आ रही है, ऐसे में वर्तमान में श्री क्षत्रिय युवक संघ ही एक मात्र सहारा है, एक मात्र मार्ग है। समाज को संगठित करने का दायित्व संघ ने स्वीकारा है (ओढा है) और संघ समझा रहा है कि संगठन ही जीवन का केन्द्र बिन्दु है। समाज का, राष्ट्र का, हित सर्वोपरि है। समाज और राष्ट्र के लिये समर्पित जीवन और त्याग ही वन्दनीय है। हम स्वार्थ से ऊपर उठें। समाजहित में, राष्ट्र हित में व्यक्ति पूर्ण जीवन ही श्रेष्ठ क्षत्रिय की कसौटी है। जैसे हम होंगे वैसी ही हमारे समाज की तस्वीर बनेगी। वर्तमान में हमारे समाज की तस्वीर पर काल के धूलिकण जमा हैं, तस्वीर अस्पष्ट है। जरूरत है समाज को शक्तिमान और राष्ट्र को गौरवमय बनाने वाले त्याग और सदाचार के आधार पर अपना क्षत्रियोचित जीवन गठन करने की। दूसरों को सदाचारी सद्‌गुणी बनाने से पूर्व हम स्वयं सदाचारी और सद्‌गुणी बनें।

याद रखें कर्तव्य कर्म में तो हमारा अधिकार है पर फल में कदापि नहीं, और यह भी कि अकर्म में हमारी आसक्ति न हो (न रहे) अर्थात् कर्म न करने में भी हमारी आसक्ति नहीं होनी चाहिए। गीता में हमारे लिये यही निर्देश है। गीता हमारे जीवन का मार्गदर्शक ग्रन्थ है। अत: समाज सेवा के साथ अपना सम्बन्ध जोड़ना उचित नहीं है, अपने को कुछ चाहिए ही नहीं, इसलिए फल का हेतु भी नहीं बनना है और न इसकी चाह ही हो। तत्परता से, सुचारू रूप से, पूरी योग्यता और ईमानदारी से, मनोयोग से कर्म करना है, क्योंकि मनुष्य जीवन मिला ही सेवा के लिये है, योग के लिये नहीं, सेवा करके भगवद्प्राप्ति करने में ही क्षत्रिय जीवन की सार्थकता है।

हम पूछें अपने आपसे कि क्या हमारे हृदय में काम, क्रोध, लोभ, लाभ आदि विकार दूर हुए हैं? क्या हर क्षण प्रतिपल हमें श्रीराम, श्रीकृष्ण (श्री क्षत्रिय युवक संघ) दिखने लगा है? परस्पर वैर, विरोध, घृणा–ईर्षा, व्यंग और उपेक्षा, तिरस्कार राग–द्वेष से हम मुक्त हुए हैं?

चाहे हम संग में दो जनें, चाहे हों दस पाँच।
रिश्तों में दिखती नहीं, पहले जैसी आँच।।
रिश्ते सब अनमने हुए क्या साथी क्या आस।
पड़ रही गाँठ पर गाँठ है, गायब हुई मिठास।।
परस्पर रिश्तों के नींव की दरक रही जमीन,
नए पुराने अब लग रहे जैसे भारत चीन।।
स्वारथजी जबसे हुए रिश्तों के मध्यस्त,
रिश्ते तब से हो रहे घावों के अभ्यस्त।
क्यों रिश्ते पत्थर हो रहे गया कहां सब ताप,
पूछ रही संवेदना आज आप से आप।

बन्धुओ!

मनभेद बहुत हो चुके अब आओ मिलकर बात करें, सब वैर–विरोध, अलगाव–दुराव भष्म करें और अपनी नासमझियों पर मिलकर घात करें। जीवन अब भार होता जा रहा है, परस्पर दूरियाँ बढ़ती जा रही हैं। ध्यान रखें, सहयोग पूर्व सम्यक् प्रवृत्ति हमारे जीवन को सरल बनाती है। जो वक्त बीता सो बीत चुका, उससे अब क्या मतलब? वह वक्त तो चला गया। जब रहना हमको साथ–साथ तो परस्पर अदावत के कोई कारण नहीं। अपनी विशिष्ठ आस्थाओं को मन

अभ्यासों पर रखकर भी हमें मिलकर चलना ही है, अब परस्पर संघर्षों का, मनभेदों का कोई अर्थ नहीं है। आओ जरा से बैठकर सोचना शुरू करें चेतना नई भरें।

आज अकस्मात् एक पुराने साथी मिल गए, दुआ-सलाम हुई। पूछा आजकल कहाँ रहते हो? क्या करते हो? बोले-आजकल अकेला हूँ, कोई साथी है न संगी, जीवन से हार गया हूँ। आजकल किताबें पढता हूँ, किताबों से बातें करता हूँ, किताबें मेरा दुख दर्द हरती हैं, किताबें मुझसे बहुत कुछ कहना चाहती हैं। मैं दिन भर किताबों से बातें करता हूँ क्योंकि अकेला हूँ। किताबों में गीत भी है, ग़ज़लें भी हैं कहानियाँ भी हैं और ज्ञान भी है, उन्हें अपने पास रखने में शान भी है। वे मुझमें प्रेम भरती हैं और मुझे शान्त भी रखती है। किताबों में खुशियाँ भी हैं, गम भी हैं गम की बातें हैं तो बीती हुई यादें भी हैं। किताबें मेरे बहुत काम आती हैं, मुझे जीवन का सच सिखलाती हैं। किताब ने ही मुझे सावधान किया कि किसी को तड़फाओगे तो तुम खुद तड़फोगे, किसी को ठोकर दोगे तो तुम खुद ठोकरें खाओगे।

मैंने उनका पता और फोन नम्बर पूछा, वे बताने लगे तो मैंने अपनी जेब से डायरी निकाली, लिखने लगा तो मेरी डायरी में एक फोटो देख उन्होंने वह फोटो झपट ली। उसे अपने सामने रखकर वे भावविभोर हो गए-गुनगुनाने लगे-

प्राणों में विश्वास आपका,
कण-कण में आभास आपका,
झलक बरसों से कभी मिली नहीं,
पर फैला है आसपास एहसास आपका।

(फोटो पूज्य तनसिंहजी की थी)

मेरा यह साथी बरसों से सम्पर्क में नहीं है, तो क्या मैं उसे संघ का विरोधी मानने की भूल करूँ, उसकी आलोचना करूँ या......(निर्णय पाठक करें)

माना कि सलामत जो अब हैं, उनसे है जवानी,
पुरानों की भी तो है, एक लम्बी कहानी।

हे प्रभु! हमारे बीच भ्रम की बर्फ कब पिघलेगी और कब बहने लगेगी, परस्पर विश्वास की गर्म हवा?

भावना की शक्ति प्रसरणशील होती है। भावना हमारी सूक्ष्म भाषा है, सूक्ष्म वाणी है। एक व्यक्ति के मन में जो भाव या भाषा बनती है, सामने वाले व्यक्ति के मन में उसकी प्रतिक्रिया भाषा में बन जाती है। यह जाना-पहचाना सत्य है जिसे कोई उलट नहीं सकता। एक व्यक्ति किसी के बारे में अच्छे विचार करता है सामने वाले में अपने आप अच्छे विचार आ जाते हैं, बुरे विचार करने पर बुरे विचार आ जाते हैं। उसके प्रति अप्रियता की भावना जाने अनजाने पैदा हो ही जाती है।

असन्तोष और टूटन से कुछ नहीं बनेगा। अप्रिय परिस्थितियों को न बदल पाने की चिन्ता हमें पूरी तरह से तोड़ डालेगी। इसलिए अच्छा तो यही है हम उसे स्वीकार कर लें, सहन कर लें, जिसे हम बदलने में समर्थ नहीं हैं। यह है नीयति के साथ समझौता जो अपिरहार्य है, जिसे टाला नहीं जा सकता, उसके साथ मनोयोग से सहयोग करें। घुटन पालने से कुछ नहीं बनेगा, उल्टा जीवन दूभर हो जाएगा।

गीता के दूसरे अध्याय में विवेक का महत्त्व समझाया है-अनुकूल-प्रतिकूल परिस्थितियाँ आती जाती रहती हैं-सदा नहीं रहतीं। बारहवें अध्याय में कहा गया है कि मान-अपमान, अनुकूल प्रतिकूल, परिस्थितियों में राजी-नाराज, हर्षित नहीं, उद्विग्न नहीं, किसी को देखकर भी नहीं-बस, 'समभाव'। ये बातें हमारे जीवन में उतरनी चाहिए, व्यवहार में दिखनी चाहिए। इसी प्रकार सोलहवें अध्याय में है कि दम्भ, दर्प, अभिमान, काम, क्रोध, लोभ, आसुरी सम्पत्ति का त्याग और अभय, अहिंसा, सत्य, दया, दान,

यज्ञ, तप, अक्रोध देवी-सम्पदाएँ हैं, इन्हें ग्रहण करें। सतरहवें अध्याय में कहा-श्रम, निष्ठा-सत् राजसी तामसी सब काम भगवान का नाम लेकर शुरू करें।

पंख के अभाव में पक्षी की तरह हम आकाश में तो नहीं उड़ सकते, लेकिन पाँवों से चलकर शिखर की ऊँचाइयाँ तो हम छू ही सकते हैं। किन्तु हम इतने भी अधीर न बनें कि हमारी शान्ति और सफलता हमसे दूर होती चली जाए। अन्तर्मन में प्रश्न उठते रहें कि मैं कौन हूँ कहाँ से आया हूँ, जीवन का स्रोत क्या है? ऐसे प्रश्न ही जीवन में अध्यात्म की शुरुआत है। अनुभव के द्वार खुलते ही किताबी ज्ञान का मोह स्वत: छूट जाता है। अपरिग्रह का आचरण समाज सेवा का ही एक चरण है। अपने परिग्रह पर अंकुश लगाना चाहिए तभी निजी स्वार्थों का त्याग सम्भव होगा। हृदय का सौन्दर्य दर्पण में नहीं देखा जा सकता उसकी पहचान तो सौम्य व्यवहार ही है। किसी को तमीज सिखाने से पहले हम स्वयं तमीज सीखें। समूह में बैठना, उठना, बात करना, कहना सुनना कैसा हो इसका सदा ध्यान रखना लोकसंग्रह और संगठन के ही अंग हैं। अवसर की प्रतीक्षा करने की बजाए स्वयं अवसर पैदा करने वाला मनुष्य बुद्धिमान होता है। समूह में हमारा होना ही नहीं, न होना भी हमारा एहसास करवाए, हम कुछ ऐसे बनेंगे तभी लोग हमारी ओर-संघ की ओर आकर्षित होंगे। अनुभूति को अभिव्यक्ति के सहारे की जरूरत नहीं होती। अनुभूति निराश होकर निष्क्रिय बैठे रहने से नहीं निरन्तर सक्रियता में बसती है।

स्वयं को पूजाना आत्म-प्रशंसा है, स्वयं को पूजना परमपिता परमेश्वर की ही पूजा है। दूसरों के द्वारा स्वयं को नहीं सुधारा जा सकता, स्वयं के संकल्प से ही स्वयं का सुधार सम्भव है। यदि मैं चाहता हूँ कि मेरी उपेक्षा न हो तो मुझे औरों की उपेक्षा से बचना चाहिए। जो सोने के घिसने के डर से अंगूठी नहीं पहनते, वे सोने के उपयोग का आनन्द नहीं ले सकते। जूता तो जूता ही होता है जो पाँवों में पहना जाता है, वह चाहे कपड़े का हो, चाहे चमड़े का हो और चाहे चाँदी का हो मन्दिर में जूता पहन कर प्रवेश का कोई तर्क मान्य नहीं हो सकता।

महत्त्व इसका नहीं है कि हमारे कितने सेवक हैं, महत्त्व इसका है कि हममें कितना सेवाभाव है। कौओं को हंस नहीं सुहाता, पर हँस कौओं को निभा लेता है। आकाश में वही उड़ सकता है जो घोंसले से बाहर निकल कर अपने पंख खोलने की हिम्मत करता है।

छिदने वाला मोती बनता है, कटने वाला हीरा। हम मोती बनें कि हीरा इसका निर्णय कोई दूसरा नहीं, हमें स्वयं ही करना होगा। किन्तु हड़बड़ी नहीं, जहाँ हड़बड़ी वहाँ गड़बड़ी। हर तल में चन्दन नहीं होता, हर वन में चंदन होता तो उसकी कीमत अन्य लकड़ियों जितनी ही होती। श्री क्षत्रिय युवक संघ एक योग्य, चतुर, कुशल और समर्थ माली (पूज्य तनसिंहजी) का संवारा हुआ उपवन है। इसे संवारे रखना हमारा कर्तव्य है और हमारा दायित्व है। कैसे? इस पर विचार करना और करते रहना हमारा स्वभाव बन जाना चाहिए। किन्तु केवल विचार ही नहीं, कुछ और भी......।

तो....

यह नैया बड़ी पुरानी और डगमग करती भैया।
तुम कैसे पार लगोगे बिन हिम्मत बिन खेवैया।।
हो जग में ज्योति जगानी, जीवन में साध बड़ी हो।
जुगनू की चमक से क्या हो, अन्तर में आग भरी हो।।
है एक लक्ष्य हमारा एक ध्वजा है भैया
एक ही रंग रंगे हैं एक ही है खेवैया
मन एक हों, हम एक हों, हम सबके सपने एक हों..।

गतांक से आगे

मर्यादा के दृष्टिकोण से भगवान श्रीराम और श्रीकृष्ण

– व्याख्याकार–परमहंस स्वामी श्री अड़गड़ानन्द जी
संकलन–डॉ. भंवरसिंह भगवानपुरा

शम्बूक प्रसंग– भगवान श्री राम के इतिवृत्त में यह कथानक भी जुड़ा है कि उन्होंने तपस्यारत एक शूद्र शम्बूक की हत्या की। अत: राम दलितों के शत्रु थे। वे उन्हें अपना आदर्श क्यों मानें? यह संवर्ण–अवर्ण, उच्च और दलित वर्ग का सृजन तो अभी हाल की घटनाएँ हैं। आदि काव्य रामायण में वर्णव्यवस्था का नाम ही नहीं है। वर्ण के नाम पर समाज में कार्य विभाजन की व्यवस्था डेढ–दो हजार वर्षों की उधेड़बुन है जिससे समाज आज भी उबर नहीं पा रहा है। भगवान बुद्ध के समक्ष भी वर्ण–व्यवस्था का प्रश्न आया किन्तु उन्होंने इस व्यवस्था को समर्थन देने से इन्कार कर दिया। हजार–डेढ हजार वर्षों की राजनीतिक उथल–पुथल ने सामाजिक व्यवस्था को वर्ण–व्यवस्था का नाम दे दिया।

आदि धर्म शास्त्र गीता में वर्ण आन्तरिक साधना के सोपान हैं। आत्म दर्शन की विधि, साधन पद्यति का अनुशीलन करने वाला साधना के आरम्भिक स्तर पर शूद्र कहलाता है। विधि प्राप्त होने पर दैवी सम्पद् का अर्जन होने लगता है तो वह वैश्य, प्रकृति के द्वन्द्वों से संघर्ष की क्षमता आने पर वही क्षत्रिय कहा जाता है तथा ब्रह्म में विलय की योग्यता आई तो ब्राह्मण। भगवान का दर्शन, स्पर्श, प्रवेश और उनमें स्थिति प्राप्त महापुरुष तत्वदर्शी कैवल्य ज्ञान प्राप्त सद्गुरु हो जाता है। आप्तपुरुषों द्वारा साधना के लिये प्रयुक्त नामों के अनुरूप व्यवस्थाकारों ने सामाजिक विभागों का नाम ढाल दिया। प्राचीन भारत में जातिवाद कभी था ही नहीं। गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने निर्देश दिया कि–

श्रेयान्स्वधर्मो विगुण: पर धर्मात्स्वनुष्ठितात्।
स्वधर्मे निधनंश्रेय: परधर्मो भयावह:।।

गीता 3/35

अर्जुन! 'श्रेयान्स्वधर्मो विगुण:' स्वभाव में पायी जाने वाली क्षमता के अनुसार कर्म अर्थात् आराधना–चिन्तन में लगना स्वधर्म है। साधक प्रवेश काल में है तो उसे महापुरुष की सेवा ही करनी है। यदि वह सेवा छोड़कर ब्रह्मलीन महापुरुष होने का ढोंग करता है तो भय को प्राप्त होता है–अर्थात् आवागमन को प्राप्त होता है। प्राथमिक कक्षाओं का छात्र स्नातक कक्षाओं में बैठने लगे तो वर्णमाला ज्ञान से भी वंचित रह जाएगा। वर्णों की श्रेणियाँ साधना के क्रमोन्नत सोपान है। इस विषय को विस्तार से जानना चाहें वे देखें 'यथार्थ गीता' श्लोक संख्या 18/41, 45, 46, 42। आरम्भिक साधक शूद्र स्तर का है, अल्पज्ञ है, तब भी पूजन उसी परमात्मा का उसे करना है जो कण–कण में व्याप्त है, ज्योतिर्मय है, जिसके तेज से सृष्टि का पालन, सृजन और परिवर्तन होता है।

स्वभाव के अनुसार ही कर्म में लगा हुआ परमसिद्धि को प्राप्त होता है। पूजा एक परमात्मा की ही करनी है। स्वभाव से निर्धारित क्षमता के अनुसार करनी है, किन्तु व्यवस्थाकारों ने जीवन यापन के व्यवसायों को वर्ण का नाम दे दिया जिससे कालान्तर में लोग यह भूल गये कि ये साधना के अन्तरंग सोपान हैं। चिन्तन साध्य है। लोग बाहर ही भटकने लगे, समाज में विकृति और परस्पर द्वेष का बीजारोपण हो गया और वर्ण को जातियों का रूप दे दिया तथा जन्म से ही वर्ण मानने लगे।

अल्पज्ञ अवस्था का साधक यदि उन्नत श्रेणी के साधकों की अवस्था का अभिनय करता है, उनकी नकल करने का प्रयास करता है तो वह भय को प्राप्त होता है, आवागमन को प्राप्त होता है। इसी का चित्रण बाल्मीकि रामायण के शम्बूक प्रकरण में है। जन्मना सामाजिक जाति की व्यवस्था का उल्लेख बाल्मीकि रामायण में कहीं नहीं है। शूद्र शम्बूक अर्थात् अल्पज्ञ साधक जब समवृत्ति (शम्बूक) का अभिनय करता है, ऐसी अवस्था में जो साधना जागृत हो गई थी, जो ब्रह्म चिन्तन जाग्रत हो गया था, ब्राह्मणत्व का जो सूत्रपात हो गया था, वह मिट जाता है। यही ब्राह्मण बालक का मरना है।

राम ने विभिन्न दिशाओं में अन्वेषण किया। पूर्व दिशा अर्थात् आरम्भिक अवस्था वाली दिशा में शूद्र को एक वृक्ष में उलटा लटका हुआ तपस्यारत देखा। अल्पज्ञ साधक ब्रह्मतत्वों का अभिनय कर रहा था। वह वृक्ष में ही लटका हुआ था-'संसार विटप नमामहे'। संसार विटप की शाखाओं में ही झूल रहा था। किन्तु अपने को शम्बूक कह रहा था, समत्व की वृत्ति का उच्चारण कर रहा था। राम ने त्याग रूपी तलवार से उसे नीचे गिरा दिया। उसके गिरते ही ब्राह्मण तत्काल जीवित हो उठा, ब्राह्मणत्व पुन: जागृत हो गया। भटके हुए साधक की साधना ने गति पकड़ ली। मध्यकालीन युग में शिक्षा प्रतिबन्धित हो जाने से एक भ्रान्ति आई कि राम ने शूद्र को मार दिया। बाल्मीकि रामायण कोरा इतिहास ग्रन्थ मात्र नहीं है, उद्धार का साधन भी है। इसमें यत्र-तत्र योग विधि, साधना पद्धति का चित्रण है, जिसे न समझ पाने के कारण ही तरह-तरह के प्रश्न उठाये जाते हैं। बाल्मीकि रामायण में जाति-पाँति का उल्लेख कहीं नहीं है। यदि यही सही होता तो भगवान अपना प्रिय परिवार व्याध बाल्मीकि के आश्रम में क्यों छोड़ते। बाल्मीकि का भी उद्धार न होता, राम ने अधर्मों का उद्धार न किया होता। स्वच्छ वस्त्र धोबी के यहाँ क्यों जायेगा? भगवान तो पतित पावन हैं। हम पतित हैं और उन्हें पवित्र करना है।

रुक्मिणी प्रसंग –

योगेश्वर भगवान श्रीकृष्ण का व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व अमलात्मा महात्माओं का आदर्श है। किन्तु निहित स्वार्थ के वशीभूत प्राणी उनके लोकेतर उदात्त चरित्र पर उंगली उठाकर अपनी दूषित मनोवृत्ति का ही परिचय देते हैं। एक आरोप है कि अपनी पत्नी रुक्मिणी का परित्याग कर वे राधा के साथ रमण करते रहे। ऐसे मनगढन्त निष्कर्ष निकाल लेना उनके अज्ञान का ही द्योतक है। वीतराग महर्षि द्वैपायन व्यास रचित श्री कृष्ण चरितामृत श्रीमद्भागवत में भगवान श्री कृष्ण की लीलाओं का विवरण मिलता है। गोकुल में नन्दराय जी के यहाँ ग्यारह वर्षों तक बाल-लिलाएँ कर बारहवें वर्ष के प्रवेश में श्रीकृष्ण मथुरा चले आए, कंस का अन्त किया, शिक्षा प्राप्त की, राजकीय कार्यों में सहयोग देने लगे।

अपने दामाद की मृत्यु का समाचार सुनकर मगध नरेश जरासंध ने मथुरा पर भयंकर आक्रमण किये। उसे पराजित करने पर भी श्रीकृष्ण ने उसका अन्त नहीं किया। श्री कृष्ण ने कहा-यह पराजित और क्रोधान्ध जरासंध अपनी प्रकृति से सभी को एकत्र कर यहाँ लाता रहेगा, उन्हें समाप्त करने के पश्चात अन्त में इसका भी क्रम आयेगा। जरासंध अट्ठारह बार मथुरा पर आक्रमण करता गया। श्रीकृष्ण ने मथुरा छोड़कर द्वारिका में राजधानी का निर्माण किया, जनता को वहाँ भेज दिया। स्वयं जरासंध को युद्ध के लिये ललकारते हुए एक पहाड़ पर चढे और दूसरी ओर से द्वारिका की ओर निकल गये। दाऊ ने कहा-कन्हैया! तुम भाग रहे हो, लोग तुम्हें रणछोड़ कहेंगे। कन्हैया बोले-मैं कायरों की तरह भाग नहीं सकता दाऊ! मैं भाग नहीं रहा हूँ, यह युद्ध नीति है। अभी उन्हें खुश हो लेने दें, उनका

अन्त अभी आया नहीं है। उनकी मृत्यु में किंचित विलम्ब है। जरासंध और उसकी सेना ने उस पहाड़ी पर आग लगा दी। खुशी मनाता हुआ जरासंध लौट गया कि उन दोनों ग्वालों को मैंने भून डाला।

राजकुमारी रुक्मिणी का स्वयंवर होने लगा। उसके पिता उसका विवाह चेदी नरेश शिशुपाल से करना चाहते थे। रुक्मिणी भगवान श्रीकृष्ण में अनुरक्त थी। उसने श्रीकृष्ण से रक्षा की याचना की। श्री कृष्ण वहाँ गये और रुक्मिणी को लेकर चले आये, उससे विधिवत विवाह किया। शादी-विवाहों के द्वारा पड़ोसी नरेशों की मैत्री और सहायता से राजतंत्र को सुदृढ करना तत्कालीन प्रथा थी जिसके कारण श्री कृष्ण के प्रासाद में आठ पटरानियाँ थी।

इतने वर्षों में श्रीकृष्ण एक बार भी लौटकर मथुरा या वृन्दावन गये ही नहीं। राधा के संरक्षण में गोपियाँ भजन-चिन्तन करती रही, फिर भी लोगों का आक्षेप है कि रुक्मिणी जैसी पत्नी के होते हुए भी वे राधा के साथ रमण करते रहे। गीता के एकादश अध्याय के चंवालीसवें श्लोक की व्याख्या के क्रम में 'यथार्थ गीता' में कहा है कि श्री कृष्ण ने गीता में ओम शब्द जपने का निर्देश दिया है किन्तु लोगों की भावुकतावश 'राधे राधे श्याम मिला दे' की ध्वनि से वृन्दावन गूंजता ही रहता है। कुछ लोगों ने प्रश्न किया कि महाराज जी ने ऐसा क्यों लिख दिया? राधा एक बार प्रभास क्षेत्र में श्याम से मिली थी। हमने बताया- मरनी-करनी में तो सभी श्रद्धांजलि देने आते हैं, यह कोई मिलना हुआ?

'राधा रमण', यह यौगिक शब्द है। महात्मा लोग श्वास में रमण करते हैं। जहाँ राधा है, वहीं कृष्ण है। अर्थात् 'र' की धारा में रमण करते हैं, भगवान उन्हीं के साथ हैं। राधा भजनानन्दियों की आदर्श हैं। सबको राधा की तरह सदैव श्रीकृष्ण के चिन्तन में तल्लीन रहना चाहिए। भगवत्कथामृत के रसिक भक्तों में एक कथा का प्रचलन है कि ज्ञानी उद्धव को भक्ति का प्रशिक्षण देने भगवान ने उन्हें वृन्दावन भेजा था। उद्धव के ब्रह्मज्ञान की मथुरा में बड़ी चर्चा थी। वे लोगों को उपदेश दे रहे थे कि आप ब्रह्म हो, आत्मा हो। ज्योति स्वरूप परमात्मा को योग-साधना से अपने भीतर देखने का प्रयास करो। भगवान ने देखा, यह व्यर्थ ही समय नष्ट कर रहे हैं, उन्हें तो साधन की जानकारी ही नहीं है।

उनके सुधार के लिये भगवान उदास होकर बैठ गये। उद्धव ने जानना चाहा कि वे उदास क्यों हैं? श्रीकृष्ण ने कहा-उद्धजी! ये गोपियाँ मेरे वियोग में 'हे कृष्ण' रात दिन रट लगाये पड़ी हैं। मैं उन्हें कैसे समझाऊँ कि शासन प्रबन्ध कितना कठिन काम है। मेरे सिर पर कितना दायित्व है। भला मैं वहाँ कैसे जाऊँ? यह उत्तरदायित्व छोड़कर वहाँ जा नहीं सकता और उनका रुदन रुक नहीं सकता, इसलिये दुखी हूँ। उद्धव ने कहा-केशव! आप निश्चिन्त रहें। मैं उन्हें ब्रह्मज्ञान का उपदेश देकर आत्म तृप्त कर दूंगा, फिर वे कभी आपके लिए नहीं तड़फेंगी। श्रीकृष्ण ने कहा-शीघ्रता करो उद्धव! मुझे तुमसे यही आशा थी।

(क्रमशः)

हमारी साधना कहती है, कि आत्मा और परमात्मा के बीच विश्वात्मा का ताना-बाना तैयार करना चाहिए। हमारे सहयोगी और सामुहिक जीवन का आदर्श नक्शा उसी ताने-बाने में मिलेगा। यम-नियमादि परम्परागत प्रयोग को साधना में घटित कर आत्मा का विश्वास के साथ करना ही हमारा लक्ष्य होना चाहिए। मुक्ति को भी समष्टि-निरपेक्ष नहीं बनाना चाहिए।

– पू. तनसिंहजी

शेरों का संघ

– ईश्वरसिंह ढीमा

गाँव में एक खेत था, जिसके मालिक गाँव में रहने वाले सभी राजपूत परिवार थे। उस खेत को कोटड़ी का खेत कहा जाता था। खेत सबका था इसलिए कोई भी उसे जोतता नहीं था। भयंकर बबूल की झाड़ियाँ उसमें उग आई थी। उन झाड़ियों में गाँव के गधे बैठे रहते थे। उनका वो सहरगाह था। कुछ असामाजिक मन चले शराबी भी अपना दिल बहलाने वहीं बैठ जाते थे।

वो खेत कई वर्षों तक यूं ही पड़ा रहा। फिर एक भाई ने किसी को पूछे बिना वहाँ के बबूल काटने का ठेका एक बाहरी ठेकेदार को दे दिया। इंसान की फितरत है, एक की सक्रियता दूसरे की निष्क्रियता को दूर करती है। बबूल पर कुल्हाड़ी क्या पड़ी दूसरी ओर से आवाजें उठने लगी। दूसरे पक्ष के कुछ लड़के हाथ में डंडे लेकर सामूहिक खेत पर पहुँच गए। ठेकेदार को गालियों से नवाजा और देखते ही देखते उसके आदमियों की हड्डी पसली एक कर दी। हंगामा बड़ा हुआ तो गाँव के बुजुर्ग इकट्ठा हुए। जैसे-तैसे मामले को शान्त किया और यह निर्णय किया कि जो भी पैसा बबूल बेचकर आएगा, वह गाँव के माताजी के मंदिर में चढ़ावे के रूप में दिया जाएगा। ऐसा ही किया गया परन्तु खेत बिल्कुल साफ हो गया।

गाँव में लगातार तीन वर्षों तक अकाल की स्थिति बनी रही। खेती के अलावा दूसरा कोई भी धंधा किसी के पास नहीं था। उसमें भी राजपूत तो खेती और मवेशी पालने के अलावा कुछ भी नहीं करते थे। कोई हुनर भी नहीं आता था। अधिकांश घरों में रोटियों के फाके पड़ने लगे। लगभग सबने अपने मवेशियों को परदेश भेज दिया या बेच दिया। तीन वर्ष के अकाल ने सबकी रीढ की हड्डी तोड़ के रख दी। बचत सारी खर्च हो गई। गाँव की तीन चार बेटियों का विवाह तो दहेज के अभाव के कारण बड़ी उम्र के दूल्हों से कर देना पड़ा। दूसरी ओर उम्र दराज लड़कों को कोई पूछ नहीं रहा था, पुराने रिश्तेदार भी संबंध के मामले में नाक भों सिकुड़ने लगे। कुंवारों की उम्र गुजरे जा रही थी। गरीबी दरवाजे आई थी मेहमान बनकर और बैठ गई घर की मालकिन बनकर। जो परदेश गए वो हड्डी पसली एक करके रोजी-रोटी चलाने लायक ही कमा लेते थे, फैक्ट्रियों में बड़ी मुश्किल से काम मिलता था। मजदूरों की कोई कमी नहीं थी। सेठ लोग मजदूरों की मजबूरी का पूरा फायदा उठा रहे थे। और जो गाँव में थे उनके लिये सरकारी रोजगार योजना के अलावा कमाने का कोई चारा नहीं था। पहले-पहले तो बड़ी शर्म आई। कैसे जाकर तगारों में मिट्टी उठाए। परन्तु जब बच्चों की भूख नहीं देखी गई तो सरकारी रोजगार कार्य में जमीर मार कर जुट गए। गाँव में इतना बड़ा तालाब नहीं था। सरकारी बाबू ने सलाह दी, ''रोजगार पाना चाहते हो तो पड़ोस के गाँव में आजाओ, बड़ा तालाब है, आप लोगों को काम मिल जाएगा।'' परन्तु वहाँ कैसे जाएँ? उस गाँव में तो रिश्तेदार रहते थे। वहाँ तगारे कैसे उठाएँ, आखिर सम्मान भी कोई चीज होती है।

मियां की टांग भले ही टूट जाए पर पगड़ी सलामत रहनी चाहिए। बड़े बुजुर्ग ने मिलकर सलाह मशवरा किया और एक निर्णय पर पहुँचे कि हम भाईयों में से कोई अपनी जमीन दे जिससे माटी निकाली जाए परन्तु इस सुझाव पर कोई तैयार नहीं हुआ। तभी एक लड़का बोला-''हमारी कोटड़ी का खेत है, क्यों नहीं हम उसे ही खोदें, जिसको मिट्टी ले जानी होगी वह ले जाएँगे।'' इस सुझाव को सुनकर थोड़ देर के लिये तो सभा में सन्नाटा छा गया। सभा

में सन्नाटा छा गया। सभा में भीतर-भीतर कानाफूसी शुरू हो गई तभी सरपंच बोले-''भाईयो क्या आपको यह सुझाव मंजूर है?''

एक शख्स खड़ा हुआ उसने सरपंच से पूछा- ''सरपंच साहब अगर हम उस जमीन को खोद डालेंगे तो वह गड्ढा बन जाएगी फिर किसी काम की नहीं रहेगी।''

दूसरे शख्स ने ऊँची आवाज में कहा-''अरे! तो अब उससे हीरे उग रहे हैं? गधे चरते हैं? गधे चरते हैं, तू गधों की चिंता क्यों करता है?'' पूरी सभा में एक ठहाका फैल गया। वह लड़का चुप हो गया। सरपंच ने फिर उस लड़के से पूछा-''बात तेरी ठीक है भाई परन्तु तेरी नजर में कोई दूसरी जगह है, रण में तो खुदाई होगी नहीं आखिर हमें कोई एक जमीन का टुकड़ा तो पसंद करना ही होगा।''

आखिर में सब ने सर्वसम्मति से यह प्रस्ताव स्वीकार किया कि कोटड़ी की सार्वजनिक जमीन की ही खुदाई की जाए और जो चाहे अपने खेत में वो मिट्टी डाल दे।

सार्वजनिक खेत काफी बड़ा था और उपजाऊ काली मिट्टी से भरा पूरा था। सब भाई एक जुट होकर खेत को खोदने में लग गए। चैत्र, वैसाख, जेठ तीन महिना रोजगार कार्य चला। लोगों ने कड़ी मेहनत करके खेत को पूरा खोद डाला। खेत के स्थान पर अब बड़ा गड्ढा बन गया था। खुदाई के बदले सरकार ने रोकड़ा रकम और अनाज बांटा, जिससे अकाल के दिन बीत गए। मजदूरी करते-करते अधिकांश लोगों के शरीर हड्डियों का ढांचा मात्र रह गए थे। राजपूतों ने पहली बार अपने हाथों से मजदूरी की थी, अहंकार का सारा छद्म पसीने के साथ बह गया। कर्म करने की ज्योति से सिकुड़े हुए चेहरे ऐसे खिल गए जैसे पतझड़ के सूखे पेड़ बसन्त में हरे हो जाते हैं।

गर्मी का मौसम बीता तो नजर आकाश की ओर टिक गई। आषाढ़ का महीना खुशियाँ लेकर आया ईश्वर ने हृदयका भाव सुना और मेघ उमड़ने लगे। बड़ी भारी बारिश हुई, मोर कई दिनों के बाद लौट कर घर आए, मुक्त मन से नृत्य करने लगे। मेंढकों ने तीन वर्ष बाद धरती देखी। बारिश की रात में उनकी टर्र टर्र आवाज सुहानी लगती थी। मिट्टी की सौगंध से वातावरण मनमोहक हो गया था। किसके घर में अनाज संग्रह था, जो खेती में बीज बोते। ऐसे में गाँव का महाजन संकट मोचन बनकर खड़ा रहा। उसने सबको बीज दिए परन्तु इस शर्त के साथ कि फसल होते ही दुगना बीज लेगा; साथ ही फसल का व्यापार भी सब उसी के साथ करेंगे। कहते हैं, गरज वाले को आँख नहीं होती। बीज की जरूरत सबको थी इसलिए सब ने हामी में अपना मस्तक हिला दिया। प्रकृति की प्रसन्नता जीवन को खुशियों से भर देती है। उस वर्ष खेतों ने सोना उगला। घर धान से भर गए। खुदा देता है तो छप्पर फाड़ कर देता है। महाजन को देने के बाद भी सबके घर में दो-तीन वर्ष चल जाए उतना अनाज और कठोल बच गया। बेटियों की शादियों के मुहूर्त निकले, शहनाई गूंज उठी।

सार्वजनिक खेत अब पानी से लबालब भर गया था। वह एक बड़ा तालाब बन गया था। वर्ष भर का पीने की पानी उसी तालाब में लिया गया। कुछ लड़कों ने पेड़ लगा दिए। एक अच्छा-सा बगीचा बन गया। बड़े बुजुर्ग वहीं बैठकर हुक्का पीने लगे। खुशियाँ मनुष्य के स्वभाव में परिवर्तन लाती हैं। कुछ लोग अहंकारी हो जाते हैं तो कुछ लोगों का हृदय सद्भावना से भर जाता है। गाँव के सभी भाई वहाँ तालाब के पास बैठने लगे। सरपंच के लड़के ने एक प्रस्ताव सबके सामने रखा-''क्यों नहीं हम सामुदायिक खेती करें, और जब हमारा यह अपना तालाब पानी से भरा है तो उसका फायदा उठाएँ?''

दूसरे ने प्रश्न किया-''वह कैसे?''

सरपंच का लड़का कृषि विश्वविद्यालय से बीएससी कृषि में स्नातक होकर आया था, उसने प्रस्ताव को जरा और स्पष्टता से समझाया।

''देखो भाइयों! हम अपने खेतों से एक ही फसल लेते हैं वह भी बारिश के मौसम पर निर्भर है अगर हम इस निर्भरता को खत्म कर दें और रवि की फसल भी लेना शुरू कर दें तो हमारा काम और अधिक आसान हो जाएगा। रवि की फसल का सारा कार्य हम साथ मिलकर करेंगे। इससे मजदूरी भी बच जाएगी और खर्च भी घटेगा।

एक ठाकुर ने प्रश्न पूछा–''पानी कम पड़ गया तो?''

लड़के के पास इसका भी जवाब था। ''हमें पुराना कुआं जो बंद पड़ा है, उसे फिर जीवन्त करना होगा। वह तालाब को रिचार्ज भी करेगा और तालाब से रिचार्ज भी होगा। पहले वर्ष पचास बीघे में जीरा करेंगे। सामुहिक परिश्रम करने से खर्च भी घटेगा खर्च निकाल कर जो बचेगा उसे हम बराबर–बराबर बाँट लेंगे।''

कुछ लोगों को इस विषय में शंका थी। पुराने विचार वाले बूढे लोग आपस में कानाफूसी करने लगे परन्तु नौजवान ने अपने मन में गांठ बांध ली थी। कुछ भी हो जाए यह प्रयोग करना ही है। करणी सिंह सरपंच का बेटा था।उस टीम का नेतृत्व कर रहा था। भारी मन बुजुर्गों ने हामी में अपना मस्तष्क हिलाया और एक नए युग का प्रारम्भ हुआ।

गाँव भर में बात फैल गई कि गोल गाँव के जागीरदार सामुदायिक खेती का प्रयोग कर रहे हैं। गाँव के पटेल, ब्राह्मण, बनिया हँसने लगे कि कुत्तों का संघ कभी काशी नहीं जाता, देखना थोड़े दिनों में सब लड़ झगड़कर थक कर बैठ जाएँगे। किसी ने कहा था कि राजपूतों के बस की बात नहीं है यह तो चौधरी–पटेल ही कर सकते हैं। चौधरियों के मुखिया को जब यह पता चला तो उसके कपाल पर बल पड़ गए। मुखिया ने तो सरपंच को आकर सलाह दे दी कि–''लड़कों की तो मति मारी गई है, ऐसा कहीं हो सकता है, आप तो जागीरदार हैं आप लोग खेतों में काम करें, यह आपके खानदान को शोभा नहीं देता है, आप खेती हमें दे दें, हम आपको फसल पका कर पाँचवा हिस्सा दे देंगे। इस तरह घर पर बैठे ही आपको फसल का पांचवा हिस्सा मिल जाएगा और इज्जत बची रहेगी, आपको क्या नुकसान है ठाकुर साहब! हींग लगी न फिटकरी, रंग चोखा का चोखा।'

सरपंच और कई बुजुर्गो को खानदान की इज्जत वाली बात दिल में घर कर गई। क्योंकि उन्होंने अपने चारों ओर रिश्तेदारों में भाइयों में यही देखा था कि राजपूत काम करवाते हैं; करते नहीं, और जो जाति शारीरिक परिश्रम करती है उनकी इज्जत नहीं है। भाई सामाजिक रुतबा भी कोई चीज होती है ऐसे रुपए का क्या करना जो इज्जत बेचकर कमाया जाए।

करणीसिंह को बुजुर्ग सभा ने तलब किया। तब तक करणी अपने युवा भाइयों के साथ मिलकर तालाब से खेतों तक पानी ले जाने की पाइपलाइन बिछा चुके थे। बुजुर्गों ने करणीसिंह को चौधरियों की पेशकश के बारे में बात की, करणी सिंह बात समझ गया। उसने सहज भाषा में मगर दिल को छू जाए उस भाषा में अपने विचार रखें –

''गीता जी हमारी पवित्र किताब है भगवान की वाणी से निकली हुई। भगवान भी उसमें कर्म की सलाह देते हैं। कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु...कदाचन चौधरी हमें कर्म करने से क्यों रोक रहा है, अरे काम करने से आदमी छोटा नहीं होता काम न करने से छोटा होता है। दुर्गादास जी आठ पहर चौसठ घड़ी घोड़े पर वास करते थे ताकि जोधपुर का साम्राज्य बच सके उस समय यही उनका कर्म था। आज लोकतंत्र है हमें हमारी रही सही जमीन बचानी है, बहन बेटियों का विवाह करना है, बच्चों को अच्छी स्कूल भेजना है तो रुपया चाहिए और अपनी जमीन खोदकर चौधरियों को दे देंगे? चौधरी कमाएँगे पाँच में से चार बोरी उनकी एक हमारी, वह क्या कहते हैं–ऊँट के मुँह में जीरा। एक बोरी से होगा क्या? वे जानते हैं

कि अगर हमने स्वयं मेहनत की तो सारा माल खर्च निकाल कर हमारा होगा, हम इनकी जमीन खरीदने वाले बनेंगे, न की बेचने वाले। एक बात बताओ आप पिछले तीन अकाल में हमने मिट्टी खोदी तब तो नहीं शर्माए। अरे मुझे ये कहते हुए शर्म आ रही है कि रुपए के अभाव में बेटियाँ बुड्ढों को देनी पड़ी थी। रुपए होंगे तो हम लोगों को अपने साथ जोड़ पाएँगे और नहीं होंगे तो कुत्ता भी चौखट पर नहीं आएगा। हमारे पीठ पीछे लोग हमारी बड़ी-बड़ी बातें सुनकर मजाक उड़ाते हैं, कोई कहता है रस्सी जल गई पर बल ना गया। तो कोई कहता है ''खाली चना बाजे घना'' लोग हमारी योजना से जलकर मजाक में कहने लगे हैं-कुत्तों का संघ काशी नहीं जा सकता, अगर आज पीछे हट गए तो याद रखना हम कभी आगे नहीं बढ़ पाएँगे। और पीठ पीछे इन्हीं लोगों को गाल बजाने का मौका मिल जाएगा। बाबोसा, दादोसा, काकोसा ठाकुर साहब ध्यान देकर सुनो हुकुम छोटे मुँह बड़ी बात, परन्तु यही सत्य है शराब से जितनी हमारी जात बर्बाद नहीं हुई उससे कई गुना अधिक इस अकर्मण्य अहंकार से हुई है; कि हम तो ठाकुर हैं हम हाथ से परिश्रम कैसे करेंगे, अगर यही स्थिति रही तो वह दिन दूर नहीं जब हमारे बच्चे हाथ में कटोरा लिए चौराहों पर मिलेंगे, आपसे हाथ जोड़कर विनती है, हम जो कर रहे हैं उसी में हमारा उत्थान है, करने दें, दूसरे की बातों में आकर रोड़े न डालें।'' भरी सभा में सन्नाटा छा गया।

करणी सिंह की भावुक अपील ने सबके हृदय को छू लिया, सबसे बड़े बुजुर्ग बोले-''बेटा! जा तुझे छूट है, आज से यह सभा कभी तुम्हें और तुम्हारे साथियों को नहीं रोकेगी तू आगे बढ़, हम तुम्हारे साथ हैं।'' बोलो आशापुरा माताजी की जय। सभी ने जोश में जयकारा किया। जयकारा इतना तेज था कि दीवारों में लगे कानों के परदे हिल गए।

राजपूतों को इस तरह रोकने के असफल प्रयास के बाद चौधरियों ने कानून का सहारा लिया। किशोर सिंह एक नम्बर का शराबी था। उसे दो बोतल शराब देकर तहसीलदार से शिकायत करवाई कि तालाब के पानी में उसका हिस्सा है और वह पानी किसी को देना चाहता नहीं है। परन्तु तहसीलदार ने यह कहकर खारिज कर दी कि किशोर के पास अपनी खेती की जमीन ही नहीं है तो पानी का करेगा क्या? और फिर वह चाहे तो पानी ले सकता है परन्तु वह किसी को रोक नहीं सकता, बात आई गई हो गई।

करणी सिंह के साथ सारे नौजवान खेती में लगे। अच्छे काम में कहते हैं भगवान भी साथ देता है। उस वर्ष मानसून जीरे के अनुकूल रहा। चार महीने में जबरदस्त जीरे की पैदावार लड़कों ने की। बाजार भी उस वर्ष तेजी में था। ऊँची कीमत प्राप्त हुई। एक एक को चार-चार लाख का मुनाफा हुआ। जो परिवार किन्हीं कारणों से इस कार्य में जुटे नहीं थे वे सब पश्चाताप करने लगे। अगले वर्ष सभी इस कार्य में जुट गए। पिछले आठ-दस वर्ष से यह प्रयोग अनथक रूप से चल रहा है। कच्चे घरों के स्थान पर पक्के मकान बन गए हैं। चढने के लिये घर-घर गाड़ियाँ दिखाई देती हैं। नौजवान मोटरसाइकिल चलाते हैं। बच्चे अब गाँव की सरकारी स्कूल में नहीं पढ़ते, पड़ोस के शहर में अंग्रेजी माध्यम की स्कूल में बस में जाते हैं। जो कुंवारे थे उनकी शादियाँ तय हो गई हैं। बुजुर्ग हर वर्ष तीर्थयात्रा पे जाने लगे हैं। ढोलियों ने नासिक ढोल बजाना सीखा। लंगे अब बना बनी का गीत गाने लगे। नाईयों ने फिर से कोटड़ी की ओर वैसे ही रुख किया जैसे श्राद्ध में कौवे करते हैं।

युवाओं ने अपनी मूंछ पर बल देना शुरू किया। करणी सिंह ने पूरे गाँव को संदेश दिया-ये कुत्तों का नहीं, शेरों का झुंड है और उसे काशी पहुँचना भी आता है।

अपनी मेहनत और दृढ़ संकल्प से उसने सब के मुँह पर ताला डाल दिया था। मुँह खुलते थे तो प्रशंसा या क्षमा के लिए।

शिक्षा का महत्त्व

– स्वामी धर्मबन्धु

शिक्षा का परम उद्देश्य मानव जीवन को सर्वांगीण रूप से विकसित करते हुए ज्ञान, आत्मसंयम, मेधा-सम्पन्न, प्रतिभा, आचरणशील व्यक्तित्व तथा मूल्यनिष्ठ कर्तव्यशीलता से सुसज्जित करके परोपकार, सर्वोन्नति, शान्ति, सौहार्द, समृद्धि युक्त प्रगतिशीलता को धारण करते हुए प्रकृति से लेकर परमेश्वर पर्यन्त ज्ञानार्जन करना है, क्योंकि संस्कार एवं आचरण विहीन शिक्षा के द्वारा अर्जित की गई सम्पत्ति और शक्ति विनाश को आमंत्रित करती है, इसलिए शिक्षा के साथ विद्यार्थी के जीवन में आचरण का अत्यधिक महत्त्व होता है। जिसमें धैर्य, क्षमा एवं मानसिक संयम के द्वारा कर की चोरी, कार्य की चोरी, द्रव्य की चोरी, प्रतिज्ञा की चोरी, यश की चोरी, आचरण की चोरी और आत्म-सम्मान की चोरी इन सात प्रकार की चोरी को सर्वथा त्याग करते हुए संयम, तप, शान्ति के सहयोग से सुरा, सुंदरी एवं मांस का परित्याग करके मर्यादा में स्थित होकर मन एवं संपूर्ण इन्द्रियों को नियंत्रित करना, जिसमें बुद्धि, विद्या, सत्य, अक्रोध अर्थात् शान्ति को पुष्पित एवं पल्लवित होने के लिये उपयुक्त स्थान हो, वही शिक्षा मनुष्य की आदर्शमय जीवनशैली का निर्माण करती है। उक्त चारित्रिक शिक्षा के द्वारा मनुष्य अपने जीवन के दोषों को दग्ध कर सकता है, जो इस प्रकार है-शरीर के अन्दर तीन दोष- हिंसा, चोरी, व्यभिचार; वाणी के भीतर चार दोष- झूठ बोलना, कठोर वचन बोलना, चुगली करना एवं बिना प्रयोजन की बातें करना; मन के भीतर विद्यमान तीन दोष-दूसरों के प्रति द्रोह करना, दूसरे के धन कोहरण करने की इच्छा रखना और ईश्वर को न मानना, इस प्रकार के दोषों अर्थात् पापों से मुक्त होकर मनुष्य शिक्षित तथा दीक्षित बनता है। संस्कृत भाषा के मूर्धन्य विद्वान महर्षि पाणिनि जी के अनुसार विद्या ग्रहण करना ही शिक्षा है। श्वेताश्वतरोपनिषद् (5.1) के अनुसार-

''**क्षरं तु अविद्या अमृतं तु विद्या**''

अर्थात् अविद्या विनाशशील है और विद्या अमृत है। **विद्ययाऽमृतमश्नुते** (यजुर्वेद अध्याय 40, मंत्र 14) अर्थात् विद्या से अमृत तत्व की प्राप्ति होती है। अमृत अर्थात् वह ज्ञान सिर्फ धर्म, सत्य, अहिंसा, न्याय, प्रेम, परस्पर विश्वास एवं आत्मिक शान्ति के साथ प्राणीमात्र के हित कल्याण, सुख समृद्धि का प्रयोजन भी विद्यमान हो, वही अमृत रूपी विद्या है। भारतवर्ष के महान शिक्षक आचार्य चाणक्य जी के अनुसार जिस मनुष्य के जीवन में न तो विद्या है, न ही तप है, न ही दान, ज्ञान, शील, गुण और धर्म ही है, इस प्रकार का मनुष्य पृथ्वी के ऊपर भार सदृश है अर्थात् वह मनुष्य के रूप में पशु के समान विचरण करता है। इन्हीं विचारों का समर्थन करते हुए महाराज भर्तृहरि जी ने विद्या के महत्त्व को इस प्रकार दिग्दर्शित किया है अर्थात् विद्या मनुष्य के जीवन की सुन्दरता है। विद्या मनुष्य के पास संचित अदर्शित सम्पत्ति है। विद्या से ही संपूर्ण सुखों का उपभोग एवं यश की प्राप्ति होती है तथा विद्या आचार्यों की भी गुरु है। विदेश यात्रा में विद्या भ्राता के समान सहायक एवं विद्या ही परमदेव है। विद्या से ही देश एवं विदेश में सम्मान प्राप्त होता है अर्थात् विद्याविहीन मनुष्य पशु के समान होता है। अर्थात् शिक्षा मनुष्य को सोचने और समझने के लिये विवश करती है। यदि शिक्षा का जुड़ाव संस्कृति एवं सभ्यता से हो, तो सोचने और समझने का परिणाम सृजनात्मक होगा। यदि शिक्षा का जुड़ाव संस्कृति एवं आचरण से विहीन होगा तो सोचने, समझने का परिणाम विध्वंसक होगा। इसी

रहस्य को समझते हुए विश्व के महान शिक्षा संगठन युनेस्को (UNESCO) ने भी 1996 में संपूर्ण विश्व के विद्यालयों से अपील की थी कि वे अपने सभी विद्यार्थियों को इस ज्ञान का एहसास कराएँ कि शिक्षा की जड़ें अपनी संस्कृति में हो और विकास के प्रति प्रतिबद्धता हो। साथ ही युनेस्को के विचारशील एवं शिक्षाविद् प्रोफेसर ने संसार के सभी विद्यार्थियों को यह परामर्श दिया था कि विद्यार्थी स्वयं आत्मचिंतन करें कि हम क्यों पढते हैं? इस प्रश्न के उत्तर में युनेस्को के शिक्षाविदों के अनुसार शिक्षा के निम्नलिखित चार स्तम्भ हैं -

1. ज्ञान अर्जन के लिये विद्या पढनी चाहिए :- ज्ञान का सृजन। अर्थात् सतत् शोधकी प्रक्रिया का नाम ही ज्ञान का सृजन है। विद्यार्थी जीवन में ज्ञान का सृजन पाँच प्रकार के स्रोतों से होता है-

(1) पारिवारिक शिक्षा- मनुष्य के जीवन में विद्या का अध्ययन अपने परिवार से ही प्रारम्भ होता है।

कौटुम्बिक परिवार मनुष्य के जीवन की प्रारम्भिक पाठशाला होती है और माता-पिता ही उसके जीवन के प्रथम शिक्षक या आचार्य होते हैं। भारतीय शिक्षा की परम्परा का शुभारम्भ मानव जीवन में माता से उद्दीप्यमान होता था। जैसे महर्षि विश्वामित्र जी, श्रीराम जी को कौशल्याजी की सुयोग्य सन्तान कहकर सम्बोधित करते थे। इसी प्रकार अंजनी ने हनुमान जी को, देवकी ने श्रीकृष्ण जी को तथा कुन्ती और मदालसा ने अपने-अपने पुत्रों को विशेष रूप से प्रशिक्षित किया था। जयवन्ता बाई ने प्रताप को, जीजा बाई ने शिवाजी को एवं विद्यावती आदि अनेक माताओं ने अपनी सन्तानों को सुयोग्यतापूर्वक संवर्द्धित तथा पुष्पित एवं पल्लवित किया था। 20वीं शताब्दी के विश्व के महान समाज शिक्षक एवं समाज सुधारक महात्मा गाँधी जी के जीवन के कार्यों पर आधारित 100 Vol. की Books, Collected works of Mahatma Gandhi है। जिसके Vol. 40 Page 126 पर महात्मा गाँधी जी ने अपने जीवन के अनुभवों को इस प्रकार लिखा है ''मेरी अनपढ माँ परन्तु मेरी समझदार माँ ने हमें बचपन में सिखाया था कि जीवन की सफलता यह नहीं है कि हमारे पास कितना धन है, जीवन की सफलता यह नहीं है कि हमारे पास कितना ज्ञान है, जीवन की सफलता यह नहीं है कि हमारे पास कितनी शक्ति है, महात्मा गाँधी जी लिखते हैं कि मेरी अनपढ़ माँ परन्तु मेरी समझदार माँ ने हमें सिखाया था कि यदि तुम किसी के काम आ सकते हो, सहायता कर सकते हो, उसे बचा सकते हो, तभी तुम्हारा जीवन सफल है। इसी प्रकार बिल गेट्स को जब हारवर्ड युनिवर्सिटी ने पढाने से इन्कार कर दिया तो बिल गेट्स के जीवन में प्रोत्साहन एवं धैर्य प्रदान करने के लिये उसकी माँ की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही थी। यही कारण था कि दिनांक 7 मई, 2007 को जब हारवर्ड युनिवर्सिटी ने बिल गेट्स को मानद उपाधि प्रदान की तो उन्होंने अपने विचार उस कार्यक्रम में इस प्रकार व्यक्त किये थे- उन्होंने कहा ''जो शिक्षा मेरी माँ ने मुझे दी थी वह शिक्षा इस ईंट, पत्थर के जंगल हारवर्ड युनिवर्सिटी ने मुझे नहीं दी थी। मेरी माँ ने हमें सिखाया था कि महत्त्वपूर्ण यह नहीं है कि आपके पास कितना ज्ञान, धन एवं शक्ति है परन्तु महत्त्वपूर्ण यह है कि आप अपने ज्ञान, धन एवं शक्ति का उपयोग किस प्रकार से करते हैं। यही शिक्षा हमारे जीवन की प्रगति का अनुपम उदाहरण प्रस्तुत करती है। अत: मनुष्य के जीवन में पारिवारिक शिक्षा, शिक्षा की प्रारम्भिक सीढ़ी है।

(2) विद्यालयी शिक्षा- मनुष्य जीवन की सर्वोन्नतिशील, ज्ञान, प्रतिभा एवं बुद्धिमत्ता का विकास तथा विभिन्न विषयों का ज्ञान एवं विश्लेषण की क्षमता और ज्ञान के उपयोग का कौशल स्कूल एवं कॉलेजों से ही प्राप्त होता है।

एक विलक्षण प्रतिभा से सम्पन्न व्यक्ति के लिये संसार का प्रत्येक प्राणी, प्रत्येक वस्तु एवं प्रत्येक घटना शिक्षा एवं ज्ञान अर्जित करने का साधन बन जाती है। परन्तु एक साधारण व्यक्ति के लिये यह आवश्यक होता है कि वह स्कूल और कॉलेज में जाकर शिक्षा ग्रहण करे। स्कूल एवं कॉलेज शैक्षणिक वातावरण प्रदान करते हैं। वहाँ पर न सिर्फ गुरुओं से शिक्षा मिलती है अपितु सहपाठियों से भी शिक्षा प्राप्त होती है। जब उसे सहपाठियों के साथ रहना पड़ता है तो अनेक विशेष गुण जैसे कि पारस्परिक सौहार्द एवं प्रेम, एक दूसरे को मदद करने की प्रवृत्ति इत्यादि स्वत:ही विकसित होने लगते हैं। स्कूल और कॉलेज में एक अनुशासनात्मक वातावरण होता है, जिससे अनुशासन की शिक्षा मिलती है।

स्कूल में पढाने के लिये अध्यापकों को अक्सर विशेष रूप से प्रशिक्षित होना पड़ता है। इसलिए उनको ज्ञान प्रदान करने की कला में दक्षता हासिल होती है। यही कारण है कि स्कूल और कॉलेज में विद्यार्थियों के लिये ज्ञान प्राप्त करना अत्यन्त सुगम और सरल हो जाता है। कई स्कूलों और कॉलेजों की अपनी भूतपूर्व छात्र परिषद (Alumni) होती है जो कि उन्हें आगे के जीवन में मदद करती है। इस प्रकार यह बिल्कुल स्पष्ट है कि स्कूल और कॉलेज की शिक्षा एक व्यक्ति को भावी जीवन में योग्य बनाती है।

(3) **सामाजिक शिक्षा–** मनुष्य के जीवन में भाषा, नैतिकता, परम्परा, संस्कृति, धरोहर, अस्मिता एवं सभ्यता (Ethos & Civilisation) का ज्ञान समाज से ही प्राप्त होता है। यद्यपि ऐसे अनेक उदाहरण देखने को मिलते हैं जहाँ पर कि स्कूल और कॉलेज की पूर्ण शिक्षा नहीं होने के बावजूद भी समाज से सीख लेकर जीवन की ऊँचाइयों को छुआ गया है। इसी प्रकार ऐसे भी उदाहरण हैं जहाँ कि पूर्ण शिक्षा के बाद भी समाज से शिक्षा ली और समाज के लिये कार्य करके अद्वितीय सफलता प्राप्त की। ऐसे कुछ उदाहरणों में से कुछ महापुरुष, जैसे कि– स्वामी दयानन्द सरस्वती, डॉ. वर्गीज कुरियन इत्यादि काफी प्रसिद्ध हैं। **(क्रमश:)**

पृष्ठ 4 का शेष

समाचार संक्षेप

अन्य कार्यक्रम :

- पूज्य तनसिंहजी की धर्मपत्नी बाई राज कंवर का देहावसान 4 फरवरी को हो गया। उनका दाह–संस्कार 5 फरवरी को बाड़मेर में सम्पन्न हुआ जिसमें स्वयंसेवकों के अलावा बड़ी संख्या में लोग सम्मिलित हुए।
- संरक्षकश्री के बीकानेर, डूंगरगढ़, पायली, रतनगढ़, सीकर में कार्यक्रम रहे।
- हैदराबाद में बालकों का तथा मुंबई में बालिकाओं का शिविर सम्पन्न हुए।
- जगन्नाथपुरी में दंपती शिविर तथा यात्रा 7 से 15 फरवरी तक सम्पन्न हुई जिसमें ढाई सौ से अधिक उपस्थिति रही।
- प्रतिवर्ष की तरह पू. तनसिंहजी की जयन्ती के उपलक्ष में रक्तदान शिविर का आयोजन संघशक्ति, जयपुर में हुआ।
- संघ की अर्द्धवार्षिक समीक्षा बैठक जयपुर में सम्पन्न हुई जिसमें केन्द्रीय कार्यकारी तथा संभाग प्रमुख उपस्थित रहे।
- क्षात्र पुरुषार्थ फाउण्डेशन के अन्तर्गत चारण अधिकारियों के साथ जयपुर में कार्यक्रम रखा गया। नागौर, पाली, चित्तौड़गढ़ में फाउण्डेशन की वार्षिक बैठकें हुई।

गतांक से आगे

महान क्रान्तिकारी राव गोपालसिंह खरवा

(द्वितीय अध्याय)

– भँवरसिंह मांडासी

संकटकाल :

देश में क्रान्तिकारी पकड़े जा रहे थे। उनमें से अनेक पुलिस-यातनाएँ सहने में असमर्थ सरकारी गवाह बनते जा रहे थे। गुजरात के कपड़गंज नगर का निवासी मणिलाल नामक युवक पकड़ा गया। पुलिस द्वारा कठोर यातनाएँ दिये जाने पर उसने क्रान्तिकारियों के सारे भेद खोल दिए। खुफिया विभाग के उच्च पदस्थ अधिकारी श्री पागे के सामने, जो दिल्ली षड़यंत्र केस की जाँच कर रहे थे, उसने स्वीकार किया कि वह खरवा जाता और वहाँ से पिस्टल और कारतूस लाकर क्रान्तिकारियों को देता था।

राव गोपालसिंह के अक्खड़पन और निर्भीक आचरण से जिले के अंग्रेज अधिकारी प्रारम्भ से ही परिचित थे और वे सदैव उनसे असन्तुष्ट बने रहते थे। बारहठ केशरीसिंह की गिरफ्तारी (सन् 1914 ई.) के समय बन्दी बनाये गए सोमदत्त लहरी ने अपने बयान में बतलाया कि खरवा के राव गोपालसिंह राजपूतों को अंग्रेजों के विरुद्ध भड़का रहे हैं और विद्रोह के लिए उनकी एक सेना तैयार कर रहे हैं। तभी से अंग्रेज अधिकारी उन्हें संदेह की दृष्टि से देखने लगे थे, किन्तु उस समय राव गोपालसिंह द्वारा प्रदत्त कानून सम्मत युक्तियुक्त उत्तर से उनके खिलाफ कानूनी कार्यवाही करने का मानस वे नहीं बना सके थे। किन्तु अब सन् 1915 ई. में मणिलाल के बयानों ने उनकी शंका की पुष्टि कर दी तब उन्होंने उनको बन्दी बनाने और उन पर विद्रोह का मुकदमा चलाने की तैयारी की।

राव गोपालसिंह अजमेर-मेरवाड़ा के प्रथम श्रेणी के ताजीमी सरदार थे। मगर मेरवाड़ा में वे इतने अधिक लोकप्रिय थे कि वहाँ की जनता उनकी एक आवाज पर मरने-मारने को तैयार थी। उक्त क्षेत्र में उनके स्थापित प्रभाव से अंग्रेज अधिकारी भलीभाँति परिचित थे। राजपूताना के एक अर्द्ध-स्वतंत्र शासक के राजद्रोह के अपराध में बन्दी बनाने का यह पहला अवसर था। यहाँ के राजा-महाराजाओं, सामन्त-सरदारों एवं स्वाभिमानी राजपूतों में उनके उक्त कदम की क्या प्रतिक्रिया हो सकती है, उसकी सम्भावनाएँ भी उनकी नजर में थी। योरोप में वे जर्मनों के साथ जीवन-मरण के युद्ध में लिप्त थे। भारतवर्ष का बड़ा जनसमूह उनके विरुद्ध विद्रोही बना हुआ था। ऐसे विकट और विस्फोटक समय में राजपूताना के राजपूतों और सामन्तों को नाराज करना एवं उनमें से कइयों को विद्रोह के लिए तैयार कर देना, अंग्रेज शासकों को अभिष्ट नहीं था। इसी हेतु चार महीनों के लम्बे समय तक उपर्युक्त सभी पहलुओं पर गम्भीरता से विचार करने के पश्चात अंग्रेजों के दिल्ली स्थित राजनैतिक विभाग ने राव गोपालसिंह को 'भारत रक्षा कानून' (Defence of India Act) के तहत बन्दी बनाने का अन्तिम निर्णय लिया।

राव गोपालसिंह बन्दी– 21 जून, 1915 को अजमेर के कमिश्नर मिस्टर ए.टी. होम ने राव गोपालसिंह को अजमेर पहुँचकर उनसे मिलने हेतु टेलीग्राम द्वारा सूचना दी। कमिश्नर को उत्तर में टेलीग्राम देते हुए राव साहब ने अजमेर आने में असमर्थता प्रकट की। दूसरे दिन पत्रवाहक के साथ उन्होंने कमिश्नर को पत्र लिखकर भेजा और पूछा कि उन्हें किस कारण से अजमेर बुलाया जा रहा है, लिखकर दिया जाए, ताकि उन्हें उत्तर देने का मौका मिले।

उनके उक्त पत्र का उन्हें उत्तर नहीं मिला किन्तु 27 जून, 1915 को लगभग पाँच बजे दिन के कमिश्नर ए.टी. होम, मेडिकल अधिकारी मेक्वाट, सी.आई.डी. इंस्पेक्टर सरदार किशनसिंह और ब्यावर के तहसीलदार अचानक खरवा आ पहुँचे। खरवा गढ़ के मुख्य द्वार के बाहर रुक कर अपने आने की सूचना राव साहब के पास पहुँचाई। राव साहब के दो प्रतिष्ठित सरदार द्वार पर आये और उन्हें गढ़ के भीतर चौक में ले गये। जब वे जलेब चौक पहुँचे तो राव साहब जीने से उतर कर उनके सम्मान में सामने आए और उन्हें गढ़ की ऊपरी मंजिल स्थित माधोविलास महल में ले गए। उपस्थित सब लोगों को दूर हटाकर लगभग एक घंटा तक कमिश्नर ने राव गोपालसिंह से एकान्त में बातें की। ए.जी.जी. राजपूताना एवं चीफ कमिश्नर अजमेर-मेरवाड़ा द्वारा भारत रक्षा कानून (Defence of India Act) के अन्तर्गत उनकी नजरबन्दी हेतु प्रसारित आदेश-पत्र उन्हें पढ़ाया। इस आदेश पत्र की नकल इस पुस्तक के पेज नं. 106 पर प्रस्तुत की गई है। आदेश पत्र में निर्देश था कि आदेश मिलने के 24 घण्टों के भीतर खरवा छोड़कर टॉडगढ़ के लिये रवाना हो जाओ और वहाँ पर सरकार द्वारा निर्धारित स्थान पर जब तक नया आदेश नहीं मिले रहो और आदेश-पत्र में लिखित नियमों एवं हिदायतों का पालन करो।

28 जून, 1915 को शाम को राव गोपालसिंह ट्रेन द्वारा खरवा से ब्यावर पहुँचे व उसी रात घोड़ों की बग्गी द्वारा टॉडगढ़ के लिये रवाना हो गए। ब्यावर तक पहुँचाने साथ गए अपने पुत्र कुंवर गणपतसिंह को यह कहकर खरवा लौटा दिया कि अपने देश के प्रति सच्चे एवं निष्ठावान बने रहना। राव गोपालसिंह को दिनांक 28 जून को निश्चित समय पर टॉडगढ़ पहुँचना था किन्तु वे दिनांक 29 जून को प्रात: वहाँ पहुँचे। ''अंग्रेजी हुकूमत के विरुद्ध राव गोपालसिंह का संघर्ष'' नामक लेखमाला के लेखक श्री जगदीश प्रसाद ''दीपक'' ने लिखा है-''राव गोपालसिंह की तेजस्विता और राजपूती बांकेपन का अधिकारियों के दिल व दिमाग पर भूत छाया हुआ था। उनको अंदेशा था कि गोपालसिंह आदेश की अवज्ञा करेगा। अपने उसी भय के कारण 28 जून को दोपहर को टॉडगढ़ तहसीलदार ने अजमेर तार भेजा-''खरवा ठाकुर नहीं पहुँचे हैं, अभी प्राय: दोपहर होने को आई है।''

जब वे टॉडगढ़ पहुँचे खिदमतगार (सेवक) और निजी सहायक के कुल पन्द्रह व्यक्ति उनके साथ थे। चार घोड़े, एक घोड़ा गाड़ी और जरूरी सामान भी साथ था। घोड़ों में 'पपैया' और 'शिकारी' नाम के उत्तम नस्ल के दो घोड़े उन्हें बहुत प्रिय थे। उनके साथ के सहायक व्यक्तियों के नाम इस प्रकार हैं- 1. मिनाक्षा-एक मद्रासी ब्राह्मण, 2. मोड़सिंह भवानीपुरा, 3. पुरोहित मोड़सिंह, 4. सवाईसिंह ततारपुरा, 5. भूपसिंह निजी सचिव, 7. चांदावत मूणसिंह खरवा साथ में सेवक थे, 8. लक्ष्मीनारायण, 9. बालू, 10. देवा और 11. गिरधारी (चारों रावणा राजपूत), 12. कालू तेली, 13. मोती भील, 14. धरमा भील, 15. कालु हरिजन खरवा।

उपरोक्त नाम वाले व्यक्तियों में जो राव साहब के साथ गए थे, किसी पर भी राजद्रोह का अभियोग नहीं था। केवल राव गोपालसिंह के लिए ही नजरबन्दी का आदेश था।

टॉडगढ़ तहसीलदार की रिपोर्ट 30 जून, 1915 के अनुसार राव गोपालसिंह के साथ में जो शस्त्रास्त्र थे, उनकी सूची इस प्रकार लिखकर अधिकारियों के पास अजमेर भेजी गई थी :-

1. शोटगन-बारह बोर की बूंदकें	2
2. राइफलें	3
3. मजल लोडर्स	2
4. रिवाल्वर	3
5. पिस्टल	2

6. तलवारें	7
7. पेश कब्ज	3
8. कारतूस (जीवित)	1205
9. छर्रा–गोली	5 सेर
10. विलायती बारूद	3 कूंपी
11. देशी बारूद	1 सेर
12. टोपी	4 डिब्बियाँ

टॉडगढ़ निवासियों एवं वहाँ पर नियुक्त भारतीय अधिकारियों की छिपी सहानुभूति राव गोपालसिंह के साथ थी। अंग्रेज अधिकारी भारतीय सरकारी कर्मचारियों तक का विश्वास आसानी से नहीं कर पा रहे थे। तब वे ऐसे सभी अधिकारियों को शंका की दृष्टि से देख रहे थे। राव गोपालसिंह के टॉडगढ़ पहुँचने से पूर्व ही अजमेर के जिला कमिश्नर ने टॉडगढ़ स्थित सभी सरकारी अधिकारियों के नाम एक निर्देश पत्र भेज दिया था जिसमें लिखा था कि टॉडगढ़ स्थित तहसीलदार, नायब तहसीलदार, पुलिस के उप-निरीक्षक, आबकारी के उप-निरीक्षक, वन विभाग के रेंजर और अन्य राजकीय अधिकारियों को चाहिए कि वे खरवा के ठाकुर के टॉडगढ़ निवास के समय उनसे तथा उनके आदमियों से किसी भी प्रकार का औपचारिक सम्बन्ध न रखें। (अजमेर दिनांक 6 जून, 1915)

कंटीली सघन वृक्षावलियों से आच्छादित अरावली पर्वतमाला के एक उच्च शिखर पर स्थित टॉडगढ़ मगरा-मेरवाड़े की सामरिक कुंजी है।

सन् 1820 ई. में वहाँ के शौर्यवान लोगों पर प्राप्त विजय के उपलक्ष में मेवाड़ के तत्कालीन अंग्रेज रेजिडेण्ट कर्नल जेम्स टॉड के नाम पर सामरिक महत्त्व के इस स्थान पर टॉडगढ़ का निर्माण किया गया था। टॉडगढ़ और उसके चौतरफा का सारा पहाड़ी क्षेत्र और जंगल राव गोपालसिंह का देखा हुआ और जाना पहचाना था। वहाँ की हर पहाड़ी और घाटी का चप्पा-चप्पा उनका नापा हुआ था। उनके साथ के राजपूत उन पहाड़ियों में शिकार के लिये जाने लगे। उनकी ऐसी गतिविधियों को नजर में रखकर टॉडगढ़ के तहसीलदार ने अपनी शंकाएँ प्रकट करते हुए एक गोपनीय रिपोर्ट लिखकर अजमेर कमिश्नर को भेज दी थी।

खरवा गढ़ का घेराव

राव गोपालसिंह के खरवा छोड़कर टॉडगढ़ चले जाने के पश्चात् 30 जून, 1915 को500 सशस्त्र सैनिकों और पुलिस जवानों ने सूर्योदय से पूर्व ही खरवा कस्बे के चौतरफा घेरा डालकर गढ़ के मुख्य द्वार पर संगीन पहरा लगा दिया। बाहर से कस्बे में कोई प्रवेश करता तो बन्दी बना लिया जाता। यदि कोई भीतर से बाहर जाने का प्रयास करता तो रोक दिया जाता। शेखावाटी के प्रसिद्ध ठिकाने खण्डेला (घोटापाना) के राजा सज्जनसिंह ने जो राव गोपालसिंह के बहनोई थे, राव गोपालसिंह पर आई विपत्ति के समाचार सुनकर खरवा के सही समाचार लाने को अपने प्रतिष्ठित सरदार किशनसिंह पलसाना को खरवा भेजा था। खरवा रेलवे स्टेशन पर रेल से उतरते ही उस तलवारधारी राजपूत को बन्दी बना लिया गया और काफी पूछताछ के पश्चात उसे मुक्ति मिली। अजमेर के पुलिस अधिकारी मि. होलिन्स ने दिल्ली-षड़यंत्र काण्ड की तफ्तीस पर नियुक्त केन्द्रीय खुफिया पुलिस के अधिकारी ''पागे'' की उपस्थिति में खरवा गढ़ की तीन दिन तक तलाशी ली। खरवे का सिलहखाना (शस्त्रागार) अजमेर-मेरवाड़े में उस समय प्रथम श्रेणी का माना जाता था। वहाँ रखे गये तमाम शस्त्रास्त्रों को अधिकार में लेकर ब्यावर स्थित राजकीय शस्त्रागार में जमा करा दिया गया। गढ़ में सुरक्षित आभूषण, जवाहरात, सोना-चाँदी जो भी हाथ लगा, सरकारी अधिकार में ले लिया गया। ऊँट, बग्गी और भार वाहक गाड़ियाँ ब्यावर ले जाकर नीलाम कर दी गई। पुलिस द्वारा ऐसी लूट मचाए जाने

के पश्चात् भी गढ़ में उन्हें कोई आपत्तिजनक वस्तु या विद्रोह से सम्बन्धी दस्तावेज नहीं मिले।

खरवा की जनता राव गोपालसिंह के लिए जीती और मरती थी। खरवा निवासी नारायण माली खरवा में घटी घटना की खबर राव गोपालसिंह को देने टॉडगढ़ पहुँचा। बन्दी बनाए जाने के खतरे को जानते हुए भी साधु के वेष में वह टॉडगढ़ गया और किसी भी प्रकार से राव गोपालसिंह के पास पहुँचकर खरवा में घटित सारी घटना की खबर देकर वापिस लौट आया। (5 जुलाई, 1915)

''लीडी'' खरवा इलाके का एक ऊपजाऊ और समृद्ध गाँव है। वहाँ के लोग अपनी राजनैतिक जागरूकता के लिये सदा से प्रसिद्ध रहे हैं। खरवा में की गई पुलिस ज्यादतियों के समाचार लीड़ी वालों ने भी सुने, उनमें से कुछ लोगों ने अजमेर जाकर वहाँ पर राज्य सेवा में नियुक्त कायस्थ बाबुओं से गुप्त रूप से जानकारी प्राप्त करने का प्रयास किया। उन्हें बताया गया कि खरवा ठिकाना सरकार ने जब्त कर लिया है। लीड़ी के दो साहसी व्यक्ति उन सब अफवाहों की राव गोपालसिंह को खबर देने टॉडगढ़ पहुँचे। उन दोनों ने टॉडगढ़ के तहसीलदार के पास उपस्थित होकर राव गोपालसिंह से मिलने की इजाजत चाही और अपने वहाँ तक आने का कारण तहसीलदार को बताया। उनमें एक महाजन और दूसरा जाट था। महाजन छोटमल ने जो हंसराज खींचा (ओसवाल) का पुत्र था, तहसीलदार को बताया कि उसके भतीजे ने उसके खेत पर अतिक्रकण कर लिया है, अत: वह राव गोपालसिंह को रिपोर्ट करने आया है। दूसरे व्यक्ति प्रताप जाट ने बताया कि वह अपने खेत को काश्त करने की इजाजत राव गोपालसिंह से लेने आया है क्योंकि उसे गई साल काश्त करने से रोक दिया गया था। खरवा में उसकी फरियाद सुनने वाला अब कोई नहीं है। तहसीलदार ने उन दोनों की युक्ति-युक्त बातें सुनकर उन्हें राव गोपालसिंह से मिलने की इजाजत दे दी। वे दोनों व्यक्ति राव गोपालसिंह से मिले और खरवा में घटित सारी घटना और अजमेर में सुनी अफवाह से राव गोपालसिंह को अवगत करा दिया।

तहसीलदार ने अपनी दैनिक रिपोर्ट में लीड़ी के उन दो व्यक्तियों के टॉडगढ़ आने और राव गोपालसिंह से मिलने का वृत्तान्त लिख भेजा (ता. 7 जुलाई, 1915)। टॉडगढ़ स्थित भारतीय पुलिस अधिकारियों की सहानुभूति गुप्त रूप से राव गोपालसिंह के साथ बनी हुई थी। 7 जुलाई, 1915 को ही टॉडगढ़ के पुलिस सब-इन्सपेक्टर ने राव गोपालसिंह को मिलकर बताया कि उनके प्राइवेट सेक्रेट्री भूपसिंह पर सरकार को शंका है। उसके बयान लेने अजमेर से पुलिस इन्सपेक्टर आ रहा है। समय पर उक्त गुप्त सूचना मिलने पर भूपसिंह को उसी रात टॉडगढ़ से निकाल कर भूमिगत कर दिया गया। उसे मेवाड़ में मोड़ी के ठा. डूंगरसिंह भाटी से मिलने और उसके निर्देशन पर गुप्त रूप से अज्ञात स्थान पर रहने के लिये समझा दिया गया। मोड़ी के ठा. डूंगरसिंह भाटी राष्ट्रीय विचारों के व्यक्ति थे व खरवा राव गोपालसिंह द्वारा देशहित में अंग्रेजों के विरुद्ध किए जा रहे कार्यों के प्रशंसक थे।

(क्रमश:)

काम को अच्छी तरह करने के लिये उसमें रस लेना चाहिए और काम में रस आए, इसके लिये काम पसन्द का होना चाहिए। जिन लोगों ने राष्ट्र, संस्कृति और निर्माण के बड़े-बड़े काम किए हैं वे सभी तत्पर और जागृत कार्यकर्ता थे। जय जयकार के फेर में न पड़कर अच्छे फल के लिये कोशिश करें।

- विठ्ठलदास मोदी

इतिहास कहाँ है

– गुमानसिंह धमोरा

रजपूत पूछता भारत माता, बता मेरा इतिहास कहाँ है।
जो इतिहास लिखा था मैंने, इन हाथों, तीर तलवारों से,
जिसने वार सहे दुश्मन के, शिव शंकर जयकारों से।
रजपूत पूछता भारत माता, बता मेरा इतिहास कहाँ है।।

शीश कटा पर लड़ा झूझार, गौण किया उन वीरों को,
जो दड़बों में दुबके बैठे, बनाया महान फकीरों को।
आजादी के सौदागर बण, धन लाटा और पदवियाँ बांटी,
जिनके खातिर सिर कटवाये, हमारी उनने जड़ काटी।
रजपूतों ने सिर दे रोका, बता वह जगह खास कहाँ है।।
रजपूत पूछता भारत माता, बता मेरा इतिहास कहाँ है।।

ललनाओं ने जौहर कीन्हा,साका किया सरदारों ने,
अपना मौल बढ़ाया बढ़कर, इन सिनेमायी बदकारों ने।
छद्म हिन्दू मुगलों के वंशज, मुगलों का गुण गाया है,
सांच छिपा कर झूठ लिखाया, शियार को शेर बताया है।
आज राजपूत पोथी पलटे, पूछे क्यों परिहास किया है,
रजपूत पूछता भारत माता, बता मेरा इतिहास कहाँ है।।

ना आन बान रजपूती होती, आज कहाँ पर रहते होते,
होता खतना सबका भाई, मस्जिद में नवाज पढ़ रहे होते।
जानबूझ नीचा दिखलाने, रजपूती इतिहास छिपाया,
अपना लिखा बड़ा चढ़ा गुमान, बता किसने इनको बहकाया।
ये बेइनसाफी क्यों हुई बता, अब भी रजपूती जोश जवां है।
रजपूत पूछता भारत माता, बता मेरा इतिहास कहाँ है।।

डालियों पर खिलते हुए फूल सभी देखते हैं किन्तु मूल्य तो मिट्टी में मिले हुए उन बीजों का है जो उपवन की शोभा के लिए शहीद हो गए। दीपक पर जलने वाले ऐसे शलभ भी होते हैं, जिनका दाह कोई नहीं देखता। कुछ ऐसे भी बलिदान होते हैं जिन पर सिर्फ ओस के आँसू ही चढते हैं।

– रघुवीरशरण 'मित्र'

दृष्टिकोण-अभिगम

- संकलित

एक प्रश्न सदैव हमारे सामने रहा है कि एक समान वातावरण में पैदा होने पर, पलने, बढने पर भी अधिकांश लोग अलग-अलग स्तरों पर क्यों पहुँच जाते हैं। इसका थोड़ा बहुत सही उत्तर भी हमें पता है कि जो भी व्यक्ति अपनी लगन, योग्यता, मेहनत और धैर्य से अपने लक्ष्य प्राप्ति में लगा रहता है वो एक न एक दिन कुछ न कुछ हासिल कर ही लेता है। लेकिन मुख्य प्रश्न यही है कि अधिकांश लोगों का लक्ष्य तो सदैव से समृद्ध एवं शक्तिशाली बनना ही रहता है तो भी एक ही परिवार के, जिनकी परिस्थितियाँ भी समान होती हैं, वो भी अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग स्तर पर पहुँचते हैं। इसका क्या कारण हो सकता है। मनोवैज्ञानिकों ने इसका एक मुख्य कारण बताया है उन व्यक्तियों के दृष्टिकोण की भिन्नता।

दृष्टिकोण अर्थात आप किस तरह से सोचते हैं जैसे कि एक गिलास आधा भरा है, आधा खाली है तब कुछ लोग कहेंगे कि गिलास आधा भरा है, कुछ लोग कहेंगे कि गिलास आधा खाली है। अलग-अलग उत्तर उनकी सोच को बतलाता है अर्थात् उनके दृष्टिकोण को स्पष्ट करता है। मनुष्य का सारा जीवन उसके इसी दृष्टिकोण पर निर्भर करता है। एक ही परिवार, स्कूल, गाँव अथवा वातावरण में रहने पर भी लोग अलग-अलग अभिगम अपनाते हैं कोई व्यक्ति चंचल स्वभाव का, कोई शान्त स्वभाव का, कोई कठोर स्वभाव का, कोई कंजूस स्वभाव का, कोई व्यक्ति गंभीर स्वभाव का, कोई हंसमुख स्वभाव का होता है। यह स्वभाव सामान्यत: प्रकृति रूप से होता है। सभी लोग लगभग अपने स्वभाव के अनुसार व्यवहार करते हैं। यह स्वभाव ही उनके दृष्टिकोण का आधार हो सकता है। हंसमुख व्यक्ति गम्भीर बात, घटना को भी हल्के से लेगा जबकि गम्भीर व्यक्ति हल्की बात, घटना को भी गम्भीरता से लेगा। लेकिन परिस्थिति की अनुकूलता अथवा प्रतिकूलता के अनुसार व्यक्ति अपने सामान्य स्वभाव के विपरीत भी व्यवहार करने की क्षमता रखता है। इस गुण का अपने विकास में अधिक से अधिक उपयोग करना चाहिए। हमें सदैव बहुआयामी परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए भविष्य में दूर तक विचार कर, आशावादी आधार पर सोचना चाहिए। इससे निश्चित ही हम सदैव कुछ न कुछ अच्छा करते रहेंगे।

विचार करना, यह मानव प्रकृति है सभी मनुष्यों को अपने जीवनकाल में अनेकों अनेक विषयों एवं परिस्थितियों में विचार कर निर्णय लेने पड़ते हैं, यही निर्णय उसके जीवन को संचालित करते हैं। कभी-कभी हमारे सामने दुविधा की स्थिति भी रहती है कि आखिर हम क्या करें? ऐसे में दो विचारधारों में लोगों को निर्णय लेते हुए देखा गया है, एकहै आशावादी दूसरे निराशावादी। आशावादी विपरीत एवं कठिनतम स्थिति में भी निराश नहीं होते हैं एवं कठिन से कठिन कार्यों को अंजाम देते हैं जबकि निराशावादी लोग थोड़ी-सी भी कठिन परिस्थिति में घबरा जाते हैं। हमें सदैव आशावादी अभिगम अपनाना चाहिए। इस सम्बन्ध में कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं जिससे हम समझ सकते हैं कि हमें किस आधार पर सोचना चाहिए।

आशावादी :

आने वाला कल बीते हुए कल से अच्छा होगा।
भविष्यके उजले सपने देखता है
समस्याओं के समाधान के उपायों को सोचता है
लक्ष्य प्राप्ति में सम्भावनाओं को खोजता है।

उपलब्धियों को देखता है
मैं यह कर सकता हूँ
मुझे यह काम करना चाहिए
काम करने के रास्ते सोचता है
अपनी भूल स्वीकार करता है
दूसरों की प्रशंसा करता है
दूसरों की अच्छाईयों को देखता है

निराशावादी :

आनेवाला कल बीते हुए कल से बुरा होगा
अतीत की परेशानियों को याद करता है
समाधान में समस्याओं की ओर ध्यान देता है
लक्ष्य प्राप्ति में असम्भावनाओं को खोजता है
कठिनाईयों की सोचता है
मेरे से यह नहीं होगा
मुझे यह काम करना पड़ेगा
काम न करने के बहाने खोजता है
दूसरों की गलतियों को ढूंढता है
अपनी प्रशंसा करता है
दूसरों की बुराईयों को देखता है

विश्वके सन्तों, महान विभूतियों, चिन्तकों, योगियों एवं मनोवैज्ञानिकों ने सदैव अच्छा सोचने के कई उपाय बताये हैं। हमारे सभी बड़े हमें अच्छी कल्याणकारी बाते जानने, सोचने एवं करने की सलाह देते हैं। आजकल अनेकों प्रकार के योगिक प्रशिक्षण शिविरों का यहाँ वहाँ आयोजन होता रहता है जिससे लोग अपनी नकारात्मक एवं निराशावादी सोच को थोड़ा बहुत सकारात्मक एवं आशावादी सोच में परिवर्तित कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त अनेकों राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त लेखकों की अत्यन्त उपयोगी पुस्तकें भी इन विषयों पर उपलब्ध हैं। इसके अलावा मनोवैज्ञानिक भी इस क्षेत्र में बहुत सहायक होते हैं।

चीन के एक महान सम्राट ने अपने प्रधानमंत्री लाओत्से से यह पूछा कि विश्व का सबसे कठिन कार्य क्या है तब उसके प्रधानमंत्री ने कहा स्वयं को जानना। जी हाँ बिल्कुल सही बात है। लेकिन मनोवैज्ञानिकों ने वर्षों की तपस्या के बाद इस कार्य को कुछ आसान बनाया है, उन्होंने मानव व्यक्तित्व को चार भागों में विभाजित कर दिया है।

प्रथम – व्यक्तित्व का वह क्षेत्र जिसके बारे में स्वयं भी जानता है और दूसरे भी उसके बारे में जानते हैं

दूसरा – व्यक्तित्व का वह क्षेत्र जिसके बारे में केवल स्वयं ही जानता है दूसरे बिल्कुल नहीं जानते हैं।

तीसरा – व्यक्तित्व का वह क्षेत्र जिसके बारे में दूसरे समझते/जानते हैं वो स्वयं नहीं जानता।

चौथा – जो न स्वयं जानता है न दूसरे जानते हैं। ऐसा उन अचानक, कठिनतम परिस्थितियों के लिये कहा गया है जब मनुष्य को खुद पता नहीं होता कि वो आश्चर्यजनक परिस्थितियों में क्या प्रतिक्रिया करेगा।

इन चार भागों को निष्पक्षता से जानकर, समझकर औसत निकालकर व्यक्ति अपने आपको लगभग जान सकता है और आवश्यकता अनुसार योग, अध्ययन एवं सलाह के द्वारा अपनी सोच में, दृष्टिकोण में कुछ न कुछ सकारात्मक परिवर्तन ला सकता है। जो उसके लिये ही नहीं सबके लिये लाभदायक सिद्ध होगा।

अशुभ चिन्तन मानसिक दौर्बल्य का प्रतीक है। मनुष्य को चाहिए कि वह सदा सर्वदा आशा से भरा रहे। आशावादिता वह महौषध है, जो विविध रोगों को नष्ट करती है। इससे मनुष्य के अनेक संशय दूर होते हैं तथा आंतरिक प्रकाश होता है।

– डॉ. रामचरण 'महेन्द्र'

विचार सरिता

(नवसम्प्रति लहरी)

– विचारक

वेदों में जिस परमात्मा को नाम और रूप से रहित बताया गया, उसी परमात्मा के एक हजार नाम विष्णु सहस्रनाम में वर्णित हैं। उन नामों के अतिरिक्त भी उस अनामी को अनेकों नामों से पुकारा गया है। वास्तव में जिस परमात्मा का कोई नाम नहीं, कोई रूप नहीं, उसको जिसने आत्मसात किया वह तो समझ गया कि परमात्मा का कोई नाम या रूप नहीं है, परन्तु वह महापुरुष जब अव्यक्त का व्यक्तव्य करता है तो उसे वाणी देश पर किसी न किसी नाम का आश्रय लेना ही पड़ता है। वेदान्तगत शास्त्रों में परमात्मा के नाम और रूप को एक साथ दर्शाने के लिये एक नाम और आकार दिया गया, जिसे सभी महात्मा लोग प्रणवअक्षर ॐ कहकर पुकारते हैं। गीता में भी भगवान श्रीकृष्ण इस नाम को परमात्मा का निज नाम बताते हुए कहते हैं कि जो मनुष्य अन्त समय में इस ॐ का चिन्तन व मनन करते हुए शरीर को त्यागता है वह सदा सर्वदा के लिये मुक्त हो जाता है और उसका कभी भी पुनर्जन्म सम्भव नहीं। उसी प्रणवअक्षर ओम्कार को ज्ञानीजन अपने भाव देश में उतारकर नित्य ही उसका ध्यान करते हैं। इसीलिए तो कहा गया है कि–

ओम्कार बिन्दु संयुक्तम् नित्यम् ध्यायंति योगिन:
कामदम् मोक्षदम् चैव ओमकाराये नमो नम:।।

परमात्मा के जितने भी नाम हैं वे सभी के सभी रूप की सापेक्षा से कहे जाते हैं। समस्त दृश्य जगत में वही तो अनामी विद्यमान है। अनिर्वचनीय होते हुए भी उसको पुकारने के लिये वाणी का आश्रय लेना पड़ेगा और वाणी का विषय नहीं होते हुए भी पुकारने के लिये वाणी का प्रयोग करना ही पड़ेगा। परमात्मा के जितने भी नाम हैं वे सभी इस देह करके अर्थात् देह की सापेक्षा से हैं। जैसे–

अनात्मा की अपेक्षा से	आत्मा है,
शरीर की अपेक्षा से	शरीरी है
देह की अपेक्षा से	देही है
जड़ की अपेक्षा से	चेतन है
विनाशी की अपेक्षा से	अविनाशी है
विकारी की अपेक्षा से	अविकारी है
दृश्य की अपेक्षा से	दृष्टा है
साक्ष्य की अपेक्षा से	साक्षी है
जन्म की अपेक्षा से	अजन्मा है
व्यवशील की अपेक्षा से	अव्यय है
मरणोधर्मी की अपेक्षा से	अमर है
आकार की अपेक्षा से	निराकारी है
परिवर्तनशील की अपेक्षा से	अपरिवर्तनशील है
नामी की अपेक्षा से	अनामी है
निवृति रूप की अपेक्षा से	सहज है
अनित्य की अपेक्षा से	नित्य है
रथ की अपेक्षा से	रथी है
क्षेत्र की अपेक्षा से	क्षेत्रज्ञ है
ज्ञेय की अपेक्षा से	अज्ञेय है
एकदेशी की अपेक्षा से	सर्वदेशी है
परिच्छिन्नता की अपेक्षा से	उपरिच्छिन्न है
क्षणभंगुर की अपेक्षा से	अक्षुण है
नाना की अपेक्षा से	एक है
अभावरूप की अपेक्षा से	भावरूप है
असत् की अपेक्षा से	सत् है
दु:खरूप की अपेक्षा से	आनन्द रूप है
अवस्थायुक्त की अपेक्षा से	अवस्थातीत है
क्षर की अपेक्षा से	अक्षर है
सावयव की अपेक्षा से	निरवयव है

क्रियावानकी अपेक्षा से	अक्रिय है
प्रकृति की अपेक्षा से	पुरुष है
वध्य की अपेक्षा से	अवध्य है
चल की अपेक्षा से	अचल है
व्यक्त की अपेक्षा से	अव्यक्त है
कथनीय की अपेक्षा से	अकथनीय है
वर्णनीय की अपेक्षा से	अवर्णनीय है

परमात्मा के समस्त नामों में 'ॐ' सर्वश्रेष्ठ है। 'ॐ' शब्द ब्रह्म का प्रतीक है। यह अक्षर ही ब्रह्म है और इसी अक्षर को ब्रह्मस्वरूप समझकर इसकी उपासना करने वाला साधक ब्रह्ममय हो जाता है, इसमें संदेह नहीं। निराकार परमात्मा ही आत्मा के रूप में हमारे भीतर सदैव विद्यमान है। यह आत्मा न जन्म लेता है न मरता है। आत्मा किसी दूसरे से उत्पन्न भी नहीं हुआ है और न कोई दूसरा ही इससे उत्पन्न हुआ है। यह अजन्मा व अमर है। शरीर के समस्त विकारों व शरीर के मरणोधर्मी परिवर्तन से आत्मा निर्लेप है। आत्मा न कभी मरती है और न इसे कोई मार सकता है। प्रकृति से निर्मित कोई भी शस्त्र चाहे वह पृथ्वी तत्व का हो, अथवा जल तत्व का हो, अग्नि व वायु तत्व आदि भी कोई शस्त्र ऐसा नहीं है जो आत्मा का वध कर सके। शरीर के कट जाने के उपरान्त आत्मा ज्यों की त्यों बनी रहती है। जैसे मकान के ढह जाने से उसके भीतर के आकाश में कोई क्षोभ या विकार नहीं होता, ऐसे ही शरीर के खण्ड-खण्ड कर देने पर भी आत्मा सदैव अखण्डित ही रहती है।

आत्मा सूक्ष्म से भी सूक्ष्मतर है और महान से भी महान है तथा यह हमारे हृदय गुहा में विराजित है। जगत् की कामनाओं और आसक्ति से आच्छादित हृदय में हाजिरे हुजूर आत्मा को हम प्रत्यक्ष नहीं कर पाते हैं। इस आत्मा को वही प्रत्यक्ष कर पाता है जो समस्त कामनाओं से रहित है, जो पुत्र पत्नी व धन की उत्पत्ति व विनाश में विचलित नहीं होता तथा शान्त तथा स्थिर वृत्ति वाला है, वही अपने आत्मदेव को प्रत्यक्ष कर पाता है। आत्मा विद्या, पद, धन इत्यादि अहंकार से युक्त होते हुए भी अहंकार से परे या रहित है। यह आत्मा नाशवान शरीर का आश्रयदाता होते हुए भी शरीर से अलग है। समस्त अस्थिर पदार्थों में व्याप्त होते हुए भी सदा स्थिर है। जो ज्ञानी पुरुष इस अलख-आत्मा का यथार्थ बोध पा जाता है वह शोक से तर जाता है और एक अलौकिक आनन्द के सागर में डूब जाता है। आत्मा सबमें व्याप्त होने पर भी न तो वेद के प्रवचन से अनुभूत होती है, न विशाल बुद्धि से मिलती है और न केवल जन्मभर शास्त्रों के श्रवण से ही मिलती है। यह उसी को मिलती है, जो इसको पाने के लिये परम व्याकुल रहते हैं अर्थात् यह स्वयं प्रकाशित होने वाली आत्मा स्वयं ही कृपावान हो जाती है उसे अपना वास्तविक स्वरूप प्रकट कर देती है।

जब तक बालक खेल और खिलौनों में मस्त रहता है तब तक माता उसे कभी भी गोद में नहीं उठाती परन्तु जिस क्षण वह माँ को याद करके उसे पाने के लिये मचल जाता है, नेत्रों से माँ की गोद के लिये अविरल अश्रुधारा बह पड़ती है तो माँ तत्काल अपने पुत्र पर कृपादृष्टि करती हुई उसे गोद में ले लेती है। ठीक इसी प्रकार साधक की विरह जब तक परमात्म-प्राप्ति के लिये प्रज्वलित नहीं होती है तब तक परमात्मा भी उस जीव पर कृपा नहीं करता। अत: साधक को चाहिए कि पानी के वियोग में मछली की तड़फन की भाँति वह एक क्षण भी परमात्मा को आत्मसात किये बिना रह न सके, ऐसी उत्कंट इच्छा ही उसे अपने प्रिय प्रभु से मिला सकती है। जिन साधकों के जीवन में प्रभु प्रेम की प्यास जग चुकी है और सांसारिक भोग पदार्थ से वृत्ति जिनकी उपराम हो चुकी है, ऐसे प्रभु प्रेमियों को शत् शत् नमन्।

अपनी बात

सीखना और मानना अलग-अलग बातें हैं। मानता वही है जो सीखना नहीं चाहता। जो सीखना चाहता है वह तो मानेगा नहीं, वह तो खोजेगा और तब तक नहीं मानेगा जब तक मर्म को स्वयं पा नहीं लेगा। वह अगर किसी बात की खोज पर भी निकलेगा तो उसकी खोज मानने की खोज नहीं, जानने की खोज होगी। सीखने का अर्थ खोज है। सीखने का अर्थ जिज्ञासा है। सीखना एक यात्रा है। सीखना प्रारम्भ है, अन्त नहीं है। हमने गीता कंठस्थ कर ली, यह सीखना नहीं है। सीखना तो तब है जब गीता हमारे जीवन में उतरे। हमने संघ की बात सुनी, अच्छी लगी, यादगार में ले ली, पर यही संघ को सीखना नहीं है। संघ हमारे जीवन में उतरे तब सीखना है। यह चुनौती बन जाये कि संघ जैसे पू. तनसिंहजी जी से निकला, वैसे ही हमारे जीवन में भी पनपे। यह आकांक्षा बन जाये कि मेरे प्राणों से भी संघ का स्रोत निकले।

एक आश्रम में एक बूढी महिला बहुत दिनों से रुकी हुई थी। आई थी कि मेरे जीवन में भी कुछ घटित हो, पर वह घटना नहीं घट रही है। अत: कहती है कुछ और सिखाओ, कुछ और सिखाओ। वह बड़े-बड़े सिद्धान्त सीख गई है, शास्त्र सीख गई, लेकिन घटना नहीं घट रही है इसलिए कहती है और सिखाओ। आश्रम का संत कहता है कि तू सीखती ही नहीं, वरना तो सब तरफ वही सिखाया जा रहा है।

एक दिन वह वृक्ष के नीचे बैठी थी और एक सूखा पत्ता वृक्ष से नीचे गिर गया। बस, वह नाचती हुई आश्रम में चिल्लाने लगी कि सीख गई। लोगों ने पूछा- किस शास्त्र से सीखी? हमको भी बता दो, और भी सीखने वाले लोग मौजूद हैं।

उसने कहा शास्त्र से नहीं सीखा है। एक सूखे पत्ते को वृक्ष से गिरते देखकर बस, सब हो गया। उन लोगों ने कहा-पागल, वृक्षों से सूखे पत्ते तो हमने भी बहुत गिरते देखे हैं, तुझे ऐसा क्या हो गया? उसने कहा,- जैसे ही वृक्ष से सूखा पत्ता गिरा, मेरे भीतर भी कुछ गिर गया और मुझे लगा कि आज नहीं कल सूखे पत्ते की तरह गिर जाऊँगी। तो जब सूखे पत्ते की तरह गिर ही जाना है तो इतनी अकड़ क्यों, इतना अहंकार क्यों? और सूखा पत्ता हवा में यहाँ-वहाँ डोलने लगा, पूरब-पश्चिम होने लगा। हवा उसे टक्कर देने लगी। वह सड़कों पर भटकने लगा। आज नहीं कल जिसे मैं 'मैं' कहती हूँ, वह भी कल राख हो जाएगा और सड़कों पर हवाएँ उसे धक्के देंगी। वह सूखे पत्ते की तरह भटकेगा। तो फिर आज से अब मैं नहीं हूँ। मैंने सूखे पत्ते से सीख लिया है।

शास्त्र तो पहले पढ लिए, पर शास्त्र याद करने मात्र से घटना नहीं घटती। पर खुली आँख रखकर चुनौती लें तो घटना घट सकती है। सीखना तो संपूर्ण होता है, रोएं-रोएं से, श्वास-श्वास से, प्राण के कण-कण से, हृदय की धड़कन-धड़कन से। पूरा व्यक्तित्व जब सीखने को तैयार होता है तो जरा सी चुनौती झंकार बन जाती है और सोए हुए प्राण जाग जाते हैं। लेकिन चुनौती स्वीकार कर बढते रहें। प्रतीक्षा करनी पड़ सकती है। संघ का बीज पू. तनसिंहजी के भीतर फूटा, वह अंकुरित होकर वृक्ष बन गया है। मेरा बीज भी फूट सकता है जो मुझे संघमय बना दे। अत: मेरे अन्दर जो बीज पड़ा है उस बीज को तोड़ने की आकांक्षा सीखनी है, अभीप्सा सीखनी है। बीज को तोड़ने का संकल्प, दृढ संकल्प बनाना है। संघ में भौतिक उपस्थिति मात्र से घटना घटने की संभावना नहीं है। चुनौती लेकर अपने बीज को तोड़ना, अंकुरित करना है। ●

हमारे बंधु श्री जीवराज सिंह दाखां शारीरिक शिक्षक एवं श्री उम्मेद सिंह अकदड़ा शारीरिक शिक्षक को

खेल क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य करने के उपलक्ष में गणतंत्र दिवस पर प्रशासन द्वारा सम्मानित किए जाने पर हार्दिक शुभकामनाएं

श्री जीवराज सिंह दाखां

श्री उम्मेद सिंह अकदड़ा

-: शुभेच्छु :-

सुरेन्द्र सिंह गूगडी, वाग सिंह लोहिडी (ढंढ), प्रेम सिह परेऊ, जसवंत सिंह साजियाली, पृथ्वी सिंह थोब
तेजसिंह नौसर, पर्वत सिंह ढीढस, पदम सिंह भाउड़ा, गोविंद सिंह पायला, सुरेन्द्र सिंह भागवा वी
कान सिंह अजीत, हरी सिंह वेदरलाई, डूंगर सिंह चांदेसरा, जेतमाल सिंह बिशाला, मांगू सिंह वरिया
सवाई सिंह टापरा, सांग सिंह केरावा, गजेन्द्र सिंह सोमेसरा, हितेंद्र सिंह टापरा, नारायण सिंह कुण्डल
भैरोंसिंह डण्डाली, मूल सिंह जानकी, परमवीर सिंह ढेलाणा, पीर सिंह वेदरलाई, खीमसिंह लापुन्दड़ा
मनोहर सिंह दाखां, विजय सिंह गौड़ लाडनूं, प्रताप सिंह अकदड़ा, भवानी सिंह अकदड़ा, उदय सिंह तिलवाड़ा
प्रवीण सिंह बुड़ीवाड़ा, राणुसिंह अकदड़ा, हरी सिंह खटटू (खण्डप) सुमेर सिंह कालेवा, ईश्वर सिंह जागसा
धर्म सिंह Cटापरा, मनोहर सिंह नेवाई, तनसिंह महेचा बाड़मेर आगोर, वालम सिंह आकोड़ा, लाल सिंह आकोड़ा
हाथी सिंह केरावा, महेन्द्र सिंह पंवार रावतसर, कृष्णपाल सिंह गुड़ानाल, हरीसिंह S चान्देसरा, जगमाल सिंह थोब,
प्रेम सिंह मूठली, बलवंत सिंह दाखां, तेजसिंह कानोड़, नरपतसिंह उमरलाई, कल्याण सिंह सिणली
विक्रम सिंह अकदड़ा, देवी सिंह डाभड़, जितेंद्र सिंह सणतरा, फतेह सिंह लापून्दड़ा, गणपत सिंह वरीया तगजी
सुमेर सिंह अकदड़ा, भोपाल सिंह गोपड़ी, शिव सिंह लापून्दड़ा, दौलत सिंह मुंगेरिया

मार्च, सन् 2023
वर्ष : 60, अंक : 03

समाचार पत्र पंजी.संख्या R.N.7127/60
डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City /411/2023-25

संघशक्ति
ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा,
जयपुर-302012
दूरभाष : 0141-2466353

E-mail : sanghshakti@gmail.com
Website : www.shrikys.org

श्रीमान् ....

....

....

स्वत्वाधिकारी श्री संघशक्ति प्रकाशन प्रन्यास के लिये, मुद्रक व प्रकाशक, लक्ष्मणसिंह द्वारा ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा, जयपुर से : गजेन्द्र प्रिन्टर्स, जैन मन्दिर सांगाकान, सांगों का रास्ता, किशनपोल बाजार, जयपुर फोन : 2313462 में मुद्रित। सम्पादक-लक्ष्मणसिंह